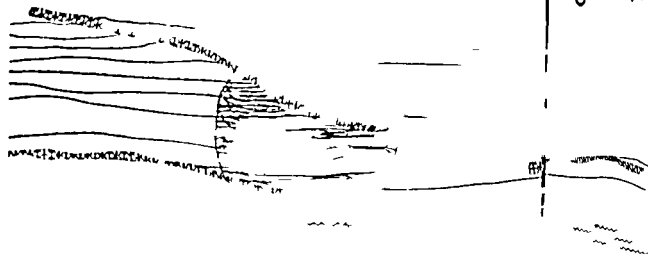




पौ फटने

से पहिले

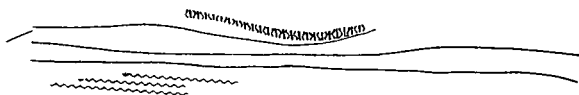
सुमित्रानंदन



राजकमल प्रकाशन

सुमित्रानंदन पंत

३३११



पौ फटने  
से पहिले

11111111111111111111

प्रथम संस्करण १९६७  
 ७ मिनिटेशन वन प्रकाशक

प्रकाशक  
 प्रकाशक प्रकाशक प्रकाशक  
 प्रकाशक प्रकाशक प्रकाशक

की छाने से बहुत मन  
 के अंतरों पर के रूपों पर  
 रखना मन में अन्तः प्रकाश  
 साधारण किता है न  
 छिपि या साधारण सा है  
 बरक न छोड़े वे वे प्रकाश ज्ञान  
 नव मन पर विचलन द्वारा  
 मन बना प्रकटा है कि  
 न किन्तु बाते प्रकाश ।  
 प्रकाशा न मानक प्रकाश प्रकाश  
 प्रकाश वा प्रकाश प्रकाश प्रकाश  
 प्रकाश प्रकाश प्रकाश प्रकाश  
 प्रकाश प्रकाश प्रकाश प्रकाश  
 प्रकाश प्रकाश प्रकाश प्रकाश

## विज्ञापन

पी फटने से पहिले म मरी सन् १९६७ की कुछ कविताएँ सगहीत हैं जिनम से अधिकांश अब के ग्रीष्मावकाश म रानीखेत म लिखी गई हैं। इन रागात्मक रचनाओं म मीने आज के युग की पष्ठभूमि म प्रमा के सचरण को अभिव्यक्ति देन का प्रयत्न किया है ये प्रतिक्रियाएँ बच्च वर्षों से मेरे भीतर संचित थी। अनेक लोग के लिए जा। कल्पना मान है वह मर लिए सत्य रहा है। जो मेरे अत्यंत पनिष्ठ सपक मे रहे हैं वे प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप स जानते हैं कि मरा मन अधिकतर इसी भाव भूमि पर विचरण करता रहा है।

मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि मैं अपनी भावनात्मक सजनाओं को इन रचनाओं म यत्किंचित् वाणी दे सका हूँ। जसा कि पी फटने से पहिले ताम स स्पष्ट है इन रचनाओं म आज के ह्लास युगीन भावनात्मक सपक का गहन अन्वय तया कल की सवेरना का आभास प्रकाश सप्रथित है साथ ही राग चेतना के सामाजिक विकास की सूक्ष्म रूप रेखा भी इनम अंतर्हित है। मुझे विश्वास है प्रस्तुत काव्य सग्रह मेरी भाव-शक्ति क अध्ययन म महायक हो सकेगा।

ये रचनाएँ मूलत जीवन की केन्द्रीय चेतना को सम्बोधित हैं।

१८ वी० ७ के० जी० माग, इलाहाबाद

१० जुलाई, १९६७

—मुमिग्रानदन पत

B

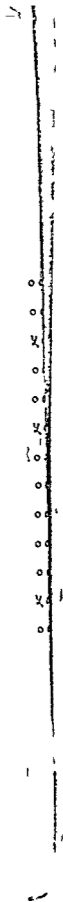


1 2 3 4 5 6 7 8 9 10 11 12 13 14 15 16 17 18 19 20 21 22 23 24 25 26 27 28 29 30 31 32 33 34 35 36 37 38 39 40 41 42 43 44 45 46 47 48 49 50 51 52 53 54 55 56 57 58 59 60 61 62 63 64 65 66 67 68 69 70 71 72 73 74 75 76 77 78 79 80 81 82 83 84 85 86 87 88 89 90 91 92 93 94 95 96 97 98 99 100

1 2 3 4 5 6 7 8 9 10 11 12 13 14 15 16 17 18 19 20 21 22 23 24 25 26 27 28 29 30 31 32 33 34 35 36 37 38 39 40 41 42 43 44 45 46 47 48 49 50 51 52 53 54 55 56 57 58 59 60 61 62 63 64 65 66 67 68 69 70 71 72 73 74 75 76 77 78 79 80 81 82 83 84 85 86 87 88 89 90 91 92 93 94 95 96 97 98 99 100



बचन को  
पटि पूर्ति पर  
सस्मेह





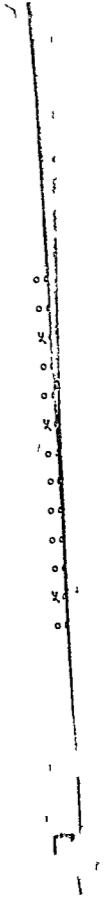


1-1

1-1



सूत्र की  
वर्ष प्रति पर  
सम्बन्ध





1 2 3 4 5 6 7 8 9 10 11 12 13 14 15 16 17 18 19 20 21 22 23 24 25 26 27 28 29 30 31 32 33 34 35 36 37 38 39 40 41 42 43 44 45 46 47 48 49 50 51 52 53 54 55 56 57 58 59 60 61 62 63 64 65 66 67 68 69 70 71 72 73 74 75 76 77 78 79 80 81 82 83 84 85 86 87 88 89 90 91 92 93 94 95 96 97 98 99 100

1. काला र
2. नीले रंग
3. लाल रंग
4. हरे रंग
5. पीले रंग
6. गुलाबी रंग
7. सफेद रंग
8. काला रंग
9. लाल रंग
10. नीले रंग
11. हरे रंग
12. पीले रंग
13. गुलाबी रंग
14. सफेद रंग
15. काला रंग
16. लाल रंग
17. नीले रंग
18. हरे रंग
19. पीले रंग
20. गुलाबी रंग
21. सफेद रंग
22. काला रंग
23. लाल रंग
24. नीले रंग
25. हरे रंग
26. पीले रंग
27. गुलाबी रंग
28. सफेद रंग
29. काला रंग
30. लाल रंग
31. नीले रंग
32. हरे रंग
33. पीले रंग
34. गुलाबी रंग
35. सफेद रंग
36. काला रंग
37. लाल रंग
38. नीले रंग
39. हरे रंग
40. पीले रंग
41. गुलाबी रंग
42. सफेद रंग
43. काला रंग
44. लाल रंग
45. नीले रंग
46. हरे रंग
47. पीले रंग
48. गुलाबी रंग
49. सफेद रंग
50. काला रंग
51. लाल रंग
52. नीले रंग
53. हरे रंग
54. पीले रंग
55. गुलाबी रंग
56. सफेद रंग
57. काला रंग
58. लाल रंग
59. नीले रंग
60. हरे रंग
61. पीले रंग
62. गुलाबी रंग
63. सफेद रंग
64. काला रंग
65. लाल रंग
66. नीले रंग
67. हरे रंग
68. पीले रंग
69. गुलाबी रंग
70. सफेद रंग
71. काला रंग
72. लाल रंग
73. नीले रंग
74. हरे रंग
75. पीले रंग
76. गुलाबी रंग
77. सफेद रंग
78. काला रंग
79. लाल रंग
80. नीले रंग
81. हरे रंग
82. पीले रंग
83. गुलाबी रंग
84. सफेद रंग
85. काला रंग
86. लाल रंग
87. नीले रंग
88. हरे रंग
89. पीले रंग
90. गुलाबी रंग
91. सफेद रंग
92. काला रंग
93. लाल रंग
94. नीले रंग
95. हरे रंग
96. पीले रंग
97. गुलाबी रंग
98. सफेद रंग
99. काला रंग
100. लाल रंग

## पवित्र सूची

१	अपकार का घोर प्रहर यह	१	००
२	कौन के स्वर्णम क्षितिज	३	००
३	जब तुम्हें मैं, प्राण छूता	५	५०
४	तुम साने के मूल्य तार सी	८	००
५	तुम नहीं होती	११	००
६	शुभ्र लाज मे लिपटी	१४	५०
७	सिर से प्रिय परा तक	१७	००
८	स्नट यह सित हृदय सौरभ	२०	००
९	कवि हूँ प्राण तुम्हारा	२३	००
१०	तुम अनत यौवना लता हो	२६	००
११	कौन कह रहा तुम अरूप हो ?	२९	००
१२	किसकी सुपमा देह पट्टि म	३२	००
१३	रात्रि का एकात क्षण	३४	५०
१४	तुम प्रसन्न उर के सित प्राण म	३७	००
१५	मरुत घट म	४०	
१६	तुम्ह सुनहली घूम वहूँ ?	४३	
१७	सित स्फटिक प्रम	४६	
१८	फिर उलने लगा सुवण मरद	५०	
१९	जहाँ जहाँ तुम खती शुभ्र चरण	५२	
२०	प्राणा की सुदम सुरभि उड़	५५	
२१	प्रिये तुम्हारी स्मति आत ही	५७	

२२	किस अतीम सुपमा वे	६१
२३	प्रिये जन्म्य चरण चापे तुम	६४
२४	बुछ भी नही यथाय जगत् म	६७
२५	सुया सिच म रहती हो तुम	६९
२६	सूदम गय फली अवर म	७२
२७	बाघ पित सी दय सिधु	७४
२८	स्वग तार सा कौन चेतना	७६
२९	मावा की बट सूदम रज्जु	७९
३०	तुम मेरी हो	८१
३१	बसी निरण बरस रही	८५
३२	चिन्तनी दया द्रवित लगनी तुम	८८
३३	तुम्ह नाम ही	९१
३४	पग पग पर मस से बूटि होनी !	९४
३५	दष्टि मुझ दी प्रमे !	९
३६	आज समी बुछ जग म	९९
३७	जिस भू पर पगध्वनि	१०२
८	नाच मन मयूर नाच	१०५
३९	और उबन और उबन	१०७
४	चिन्तनी सुदर हा तुम	१०९
४१	ये प्रणवी जन	११४
४२	माता पिता न जाना केने ?	१२०
४३	आमो आत्रा	१२४
४४	मस्त प्रहृति व प्रसंग	१२८
४५	गिरि शृगा पर माली आना	१३३
४६	वन बरु घरा पर तुमरा	१३६
४७	पौना मा बट	१३९

१०  
११  
१२  
१३  
१४  
१५  
१६  
१७  
१८  
१९  
२०  
२१  
२२  
२३  
२४  
२५  
२६  
२७  
२८  
२९  
३०  
३१  
३२  
३३  
३४  
३५  
३६  
३७  
३८  
३९  
४०  
४१  
४२  
४३  
४४  
४५  
४६  
४७

४८	कसे कहूँ क्या गोपन	१४२
४९	आज खुल गए हृदय द्वार	१४५
५०	बसे चित्त शोभा छायांकित करूँ	१४८
५१	किसने कहा कलकित	१५०
५२	क्षुधा काम को मानवीय गौरव दो	१५३
५३	तुम्हें पन से उठा प्रिये !	१५६
५४	तुम ईश्वर का भी अतिनम कर	१५८
५५	सजन व्यया जगती रहती !	१६०
५६	तुम इतनी ही निकट हृदय क'	१६२
५७	नात मुझे विद्वेष सिधु क्या	१६५
५८	युग नर के सम्मुख दारुण रण	१६७
५९	अधकार का मुख पहचानें	१६९
६०	मत अतीत से तुम विद्रोह करो	१७१
६१	प्राण तुमको ही समर्पित	१७३

८  
१  
४  
६  
९  
०२  
०५  
०७  
०९  
११४  
१२०  
१२४  
१२८  
१३३  
१३६  
१३९

००  
००  
५  
००  
००  
५  
००  
००  
००  
००  
५  
००  
००  
००  
००  
००  
००  
००  
००  
००  
००  
००



( एक )

जघकार का घोर प्रहर यह  
नीरवता गहराती रह रह,—  
मन में नहीं वही भय मलय,  
प्राण, अभी पी फटने वाली।

लोक परीक्षा का दारुण क्षण  
दृष्टि ज्याति हन, लय भ्रष्ट मन,  
वदता ही जाता मघपण  
निशा जीर भी घिरती वाली।

गरज रहा निस्तम तम सागर  
निश्चेतन भू मन का गह्वर,—  
गात मीम्य आम्ब्या का अतर  
नभ में फूटेगी ही लाली।

भाव स्तब्ध, निवान दिगतर  
छायाएँ भी चलनी भू पर,  
बीर तीर भी रही क्षितिज उर  
अणु चट की अनि मतवाली।



मद रही ताराए लोचन  
स्वप्नो से उपचेतन जमन  
निजन तम में रग रहा कुछ  
केंचुल पाड रही निधि पाली।

रगत-स्नात, लो, प्राची जवर  
धैसता उर मे स्वण पख शर  
अंगडाता सोमा समीर जग  
तण तसदल देते वरताली।

जव प्रकाश गभित लगता तम  
यह नव युग आगम का उपनम,  
चणितानि नीलम प्पाली म  
तुमन फिर रस मदिरा डाली।

वी बटने त पहिले

पडने त

( दो )

कोन व स्वर्णिम क्षितिज  
तुम पार जिनक  
प्रिय रहती हो जगोचर ।

तैर स्मित मरवत प्रसार  
हरित जलधि स  
तरल प्राणा क मनोहर,

लौघ नीलारोह मन क,

धुम्र कपाड़ें  
जहाँ स उतर निस्वर

फालसद् बालीक के  
रचती दिग्गतर !

खोजता वृ म

चेतना के तुम्हें तदगत

स्फटिक शिखरो पर  
विचर कर !



(तीन)

जब तुम्हें म, प्राण, छूटा  
दह व भीतर वही  
छूटा अगोचर।

राज म लिपटा  
उपाएँ उतर नभ स  
कल्पना के खोलती  
उर म दिगतर,

भाव वभव से प्रसन्न  
बसत करता  
रग रुचि मुकुलित  
दिगत विपण्ण पतझर।

स्वग के खुलते  
झरोखे निनिमय  
अदोष दिखता चतना मुख,

वी कन्ने से पहिले



वेह रहती रूप,  
रूप अनिच श्री सुपमा गुणा स  
भाव वेष्टित  
ज्योति मंदिर सा प्रतिष्ठित  
बोध का रस सुग्ध कर  
देता अमित सुख ।

अमल धरता प्राण मन म,  
उर अघाता ही नही  
छवि पान भर करता अनश्वर ।

रोम रोम प्रहृष करत वहन  
रम-स्तुभुक्ति से  
अंग सिहर उठते  
तडित सुख से  
मम धरयर ।

कौन कहना—  
देह हा तुम ?  
वस्तु गुण ही चेतना ह ?  
तुम पयक रज दह से  
सत्ता विमुक्कन—  
मुन वताती  
गूढ श्रुत-सधदना ह ।

पी रटन से पहिले

ही रटने के पहिले

देह पर पा जय  
प्रिये, मैं छूँ सका हूँ  
प्रीति रस मधु-छन  
ज्योति-सर  
तुम्हारा गुह्य अतर ।—

ज्ञान जाए, मान जाए,  
उतर आए  
देह मन पर  
प्राण पर  
रस ज्योति निपर,—

जननि, रूपांतर  
जगत का कर  
निरतर ।

पी कटने से बहिले



(चार)

तुम सोन के सक्षम तार सी  
कितनी हो नमनीय  
सहज कमनीय

तुम्हारे सौम्य मूल्य को  
आक नहीं पाया  
हेभागिनि  
बबर भू-नर !

सखि शतश्चेतने,  
उपक्षा करता थाया  
मनुज निरतर  
तुम्हें नगण्य  
अवस्तु समक्ष कर !

मान नहीं उसको  
तुम अपनी गोल गबिन स  
हिमगिरि को भी उठा  
नचा सवती टिपनी पर !

वी कन्ने स बहिले

न म क र  
म न क  
म न क  
म न क  
म न क

म न क  
म न क  
म न क

म न क  
म न क  
म न क

वी कन्ने स बहिले

हाय, रूप से चूर चूर  
जब मानव का मन ।  
विद्या भद, धन पद  
कुल यश भद—  
सभी उसे मोहाघ किए,  
उमत्त उठा फन ।

भूल गया वह मानवीय गण,  
निष्ठा, आस्था, सहृदयता—  
तप त्याग, समपण ।

नही जानता,  
स्नेह दुग्ध ही से होता  
जीवो का पोषण—  
सत्य प्रेरणा ही से  
जीवन का सवधन ।  
सहज भाव तमयता ही से  
श्री शोभा स्वप्नो का सजन ।

हेम लते हे  
विदश कर रहा तू तुमको  
तुम चढी रूप करो फिर धारण,—  
ध्वस्त करो मिथ्याऽभिमान को  
नष्ट करो मोसले ज्ञान को,—  
अतमुल फिर करो ध्यान को  
सचालित कर लोक यान को ।

पी फटने से पहिले



ओ निरुच्छल शिशु ही\_ सी  
हृदय-बोध-रुी

त्रि-मयि

आरम नम्र सो-दय स्पस पा  
प्रिये तुम्हारा  
यह ब्रह्मांड स्वत ही सारा  
स्वर-सगति में बँधा अखंड  
सजन लय नतित

श्री शोभा स्वर्गों मे  
होता रहता विकसित  
सित इगित मर्यादित !

गुभ

करो भ पय फिर शासित !

तुम न्यून हो  
मिन व  
कतर  
विद्-पत्र 16  
नमो नम  
कस्य  
मा किना  
का  
विना  
न

वी कटने से पहिले

वी कटने से पहिले

(पाँच)

तुम नहीं होती  
विसे म, प्राण, पहनाता  
सुनहली ज्योति र्वनि पायल ?  
जिन्हें गडते किरण चुवित  
लहरियो के मुखर करतल !  
मचलती ही कयो लहरियाँ  
दष्टि सर में ?  
स्वग विरणें ही उतरती  
क्या घरा रज पर ?—  
विचरती मुकन अवर में ।

तुम न होती तो  
वसत कभी बनाता  
रूप-मामल  
रिक्त बन वा अस्थि-पजर ?  
जहा वारह मास रहता  
हिम अविचन  
नि स्व पतझर !

सास लेंता क्या समीरण  
 गाय में भर हृदय-स्पन्दन ?  
 गध घट अहरह उडेल  
 समन फ़मर वा  
 निर्निमिष वरत वि जमिनदन ?

लता ही क्या कप  
 पिरोती हार कलिया क  
 विटप की बाह म  
 करन समपण  
 फूल यौवन ?

बोविला निदबय न गातो ! —  
 (सष्टि भी किसका सुहातो ?)  
 जम क्या लती कभी वाणी ? —  
 किसे वरती निवदन  
 वह प्रणय क्षण ?

रिक्त होता अह निराल ब्रह्मांड —  
 नभ वा नील भांड  
 वही छलकता मातिया स  
 प्रम की वणा पिराने ?  
 गाय वा स्मति-दग सोन ?  
 प्यार वर चरिताय हान ?

खोजता किसको भला तब ज्ञान  
खोल सहस्र लोचन ?  
गहन निशि का भेद  
सूची-भेद्य तम घन !  
भक्ति जप तप ध्यान  
करते विफल आराधन !

रहस चुवित विजन में  
बड़ा कँपता बाँह में  
कपित लना सा  
राज विमलय रँगा  
कोमल कामना-तन ?

तुम न होती तो प्रिये  
सौदय के सित चरण छूकर  
पार कर पाता कभी मन  
सत्य के दुजय शिखर ?—  
तमय हृदय  
भव सिन्धु पय तर !



( छ )

गुम्र लाज में लिपटी  
क्या हामी दग आयल ?

प्रवृत्ति

मझ तुम ध्यान लीन  
जात्मस्थ जान कर !

म तो क्षव रहा तुमको ही

चित स्वस्व

उर आसो म भर !

निष्क्रिय साक्षी बन

क्या हाथ बरेया आत्मन् ?

अद्वितीय एकाकी

अपने म स्थित निजन् ।—

प्राण

तुम्ही उसनी प्रवाण

गति स्थिति लय

जिनने चरणा में तमय

साधन जमना अपनापन !

प। कान के परि ३

दि

कन लिप  
लिता न  
प प्रवृत्ति  
न लय  
कन लिता  
प्रवृत्ति  
साधन

वैतन मात्र ६  
प्रवृत्ति  
३

११

११ कान के परि ३

गोज रहा था, सुमुग्ध,  
 तुम्हारे सजन-स्वप्न हिन  
 आत्मा की ममभूमि  
 प्रीति रम द्रविन घरातल,—

अतर-पय से उतर—  
 जहा उत्पु—  
 चेतना वा ज्योतिमय  
 श्री महानदल ।

प्रिय,

अनुर विग्ज म्याणु को  
 किमकी पद दाभा कर  
 रज अकुरित निरतर  
 रम प्रहप सजन के  
 मुक्त दिगता में नित  
 उदघाटित करती—  
 जग में ला स्वण युगातर ।

जीवन मगल के

अमिताम यरोवा मे हेंम

अत सुपमा के

प्रवाग पुग्कित अम्णालय

निवे,

गूय को वना

मव सपन,

सृष्टि के नम विक्वाम में

यदि नय स्वर-मगति भरते—

क्या विस्मय ?

पौ पटने से पहिले

घाय  
उर-त समयना ही  
रह जाती स्मृति-हीन—

अकूल चेतना सागर  
शोभ करता भाव मग्न  
हम दोना ही को  
निस्तल नि स्वर !

तुम्ही बोधमयि,  
मेरी अत सत्ता हो नि सशय,  
तन मन प्राणा म लय !  
मरी शोभा प्रियता ही  
घर चद्र विम्ब तन  
भरती तदगत रस परिरभण !

मर स्वप्नो क ही स्तवक  
उरोज शिखर वन  
गल घाय भरते उर में  
रस नि स्वर गोपन !

मेरी ही भावागुलना  
वन किमल्प-गुट स्मित  
सुच पिगती  
मित जहरा-मत !

पी कल्प ते पहिने

पी कल्प ते पहिने

रस ममने,

तुम असीम सहृदयता बदा ही  
उदय हृदय में होती  
बधू उपा वन,  
लज्जानत, श्री मडित ।

इससे पहिले,

याहो में भर  
मधुर चुयनी से रँग दू मुख,—  
शोभा-तमय अतर  
हो जाता सुख विस्मत ।

प्रिये,

तुम्ही हो प्रकृति पुरूप भी,  
युगल मिलन भी,  
अमृत प्रीति भी—  
जिसके प्रति  
मेरा तन मन  
सपूण समर्पित ।

मुझे तुम्ही ने

निज शिशु सहचर चुना,  
तुम्ही हो मा,  
प्रियतमा, सखी भी,—  
एव, अभिन, अगुडित ।



(आठ)

स्नेह यह  
सित हृदय-सीरम  
भाव पल्लो में  
तुम्हारी ओर धावित !

देह पलङ्गिया  
वसी रज गष में  
पर देह रज के यह न आश्रित !

हृदय-स्वर्ण मरद वृष हो  
सहज सौसा में प्रवाहित  
तुम्हें सक्षम अरूप स्पर्शों से  
प्रिये यदि करें कण्ठित,—

या अजाने  
मम हा रस भाव स्पन्दित,  
जग मैं  
आनन्द से हा राम-हृषित—

वी पन्ने से पहिले

वृत्त न करि गान  
नम - ०  
नम न  
न

गं रूप न गद  
मन स  
न  
न

रुं न

वी पन्ने से पहिले

तो समझना,  
प्रेम ने स्वर्गिक अगोचर  
बाहुवा में बाध  
तुमको वर लिया,—  
कर हृदय अविष्टित !

सूक्ष्म से अति सूक्ष्म,  
ममते, ज्योति से भी आशु गति वह  
प्राण मन में भीग  
करता भाव मोहित !

देश काल न रोक पाते,  
स्वप्न वन, स्मृति वन,  
हृदय को हृदय से  
तद्गत सतत करता मनोजित् !

वहा तुम हो, वहा हूँ म,  
प्रिय उपस्थिति  
प्राण करती रस निमज्जित,—

पहुँचता मन उड  
तुम्हारे पास तत्क्षण,  
मिलन इच्छा से  
तडित गति राग प्रेरित !



(नी)

कवि हूँ, प्राण, तुम्हारा,  
निज से हारा।

सृजन कल्पना कर से  
छूता कोमल-अंग तुम्हारे,  
फूलों में जो खुलते प्यारे  
श्री सुषमा में तमय सारे।

सौरभ पीता हूँ अधरो की,  
सुधा सरो की,  
नव मुकुटा की गंध सूध कर,—  
ललने,

मेरा हृदय तुम्हारा  
स्वप्न-नीड भर।

प्राण सखी तुम,

चूम मौन शोभा कल्पित मुझ  
हरने मोह निशा पथ का दुःख  
नयीं उपाएँ लाता भू पर  
लज्जा मडित, निस्वर।

वाहो में भरने तन  
निखिल विश्व शोभा  
धतर में करता धारण—  
गडा वक्ष में आनन !

वह तमय क्षण,  
मौन समपण—  
खुल पडता उर म  
विराट शोभा वातायन !

मा हो तुम  
म दिय योनि से  
निकला वाहर,  
शुक्ति-अक भर !

धिगु सा  
छिपा शोद म निज मुख  
भूल भेद दुख,  
हृदय-स्वना में  
त्वपना के पलन में स्वर्णिम  
नव जीवन प्रभात में अरणिम  
झला करता—

साम साम में,  
रधिर लाम में

पी पलन से पहिले

अनुभव कर  
नव जन्म ग्रहण सुख !

माता,

चरणा का छूता म  
श्रद्धा आस्था स नत,—  
कवि उर अभिमत,  
उतरे सित पग  
धरा कमल पर,  
जन मंगल का  
भू को दे वर !

१,

२  
३

द्विजे  
पौ कान्हे से पहिले

शुभ द्रवित हो  
बहता उर में  
वन रम निश्चर।

कीन सुनहली  
जग गुजार  
हृदय में निस्वर  
तुमको करती  
श्री साकार  
जगत मे भास्वर?

भाव सखी,  
तुम बहा समर सकती थी मुझमें,—  
भुझावो ही तुम  
तदाकार  
वर रही निरतर।

(ग्यारह)

कौन कह रहा  
तुम अरूप हो निराकार हो ?  
रूप तुम्हारा निखर  
लाघता रति  
अरूप - तट  
चित्त सुपमा का  
ज्योति ज्वार हो !

ध्यान लीन मन में  
जगती जब  
तुम स्मित बदन,  
आभा दशने,  
शोभा वसने

भाव योक्ने  
हृदय कमल पर भास्वर,—

कालहीन दीपता अनत  
प्रणत चरणा पर

पी कटने से पहिले



भाव सा टुठित निस्वर,  
निश्चल, तदाकार हो !

परम प्रीति तुम  
रूप अरूप एव,  
तुमको वर,  
जड चतन  
सोते जगते  
स्मित भू इगित पर ! —  
भद अभदा की तुम  
तदगत सत्य सार हो !

भाव भगिमा से  
श्री शोभा पडती वर वर,  
खुलते अतर में  
चिद वभव के स्तर पर स्तर !

धार पार सभव ?  
अक्ल अथ इति का सागर  
प्रीति बिदु ही तरी  
भद पल में जात तर ! —  
तुम्हा! मुक्ति में मुक्ति द्वार हो !

जघ गहन भू निगि  
सूची पय पाना दुष्कर —  
प्राण बिना तुमस पाए  
चिद-रूटि ज्याति वर !  
प्रीति सूत्र तुम  
तुम्ही भाव मणि सट्टि हार हो !

वी करने से पहिले

वी करने से पहिले

भू विकास पथ पर  
अदृश्य तुम करती विचरण,  
समदिग जीवन में कर  
तप रत मौन अवतरण !

प्राप्त कर सके प्रीति-पग  
तुममे जन भू मन,  
दृष्टि समग्र जना का दे  
उर आस्था नूतन ! —  
हृदय चेतना की स्वर्णिम वकार—  
प्यार हो !

गौन वताता  
तुम अल्प हो, निराकार हो !

हो !

वे दृष्टि

धी फटने से पहिले

(तिरह)

रात्रि का एकांत क्षण  
उर कक्ष निजन !

प्रीति पागी  
नीद भी जागी  
दुम्हारे ध्यान में सो,  
मिलन सुख स्वप्न में खो,—  
हृदय कवि का भाव अनुरागी ।

विलासिनि,  
प्राण उन्मादिनि

निमत उर कक्ष में आओ,  
न मुग्ध, और विलमाओ,  
हृदय सित प्रेम विस्मृति में डुवाओ ।

देह में मिल दह हो लय,  
हृदय न हो हृदय तमय  
प्राण प्राणा स लिपट  
आनंद रम नामें अनामय ।

पी कटने से परिके

रात्रि  
नीद

प्रीति  
जागी  
ध्यान  
सुख

हृदय

निमत  
उर कक्ष  
मिलन  
सुख  
स्वप्न  
मिलन  
सुख  
स्वप्न  
मिलन  
सुख  
स्वप्न

हृदय

पी कटने से परिके

स्वप्न शयन,  
शरीर आत्मिक-स्पर्श सुख भागी ।

भाव उमेपिनि,  
विकासिनि,  
उवशी सी उत्तर  
मास्वर चेतना नभ से  
त्रिदिव सौ-दय में लिपटी अनश्वर—

मलय से उठ स्वग तक  
सित भावना रस-श्रेणि  
तुम बनती अगोचर ।—

शाख बतुल  
भाव गौर  
मराल शावक वल्ल  
शोभा-पल्ल खोल-तरुण दिगतर  
मोह लेता कल्पना को  
स्वग सुपमा के दिखा  
गोलाघ सुदर ।—  
प्राण कैसे हो विरागी ?

बधू त मयते,  
निखिल सशय रहित मन—  
रूप बभब के विना  
होता अरूप अनत निधन ।

धो फटने से पहिले

देह

आत्मा से कही  
ऐश्वर्य पावन,—  
प्रेम को संपूर्ण कर सकती  
हृदय मन वह सम्पन्न ।

स्वयं ?

रति शोभा-मुकुट भर,  
अमर

शाश्वत  
वन प्रणय क्षण,  
आत्म त्यागी ।

कवि हृदय  
रस भाव अनुरागी ।

तु मय नर क  
नि प्रान न बा  
रेन स स  
र विता ह  
मन्त्रा ।

वा

दो

मा

(चौदह)

तुम प्रसन्न उर के  
सित प्राण में आती हो,  
जीवन मन का  
जड विपाद हर,  
मुसवाती हो।

अतमन की  
सहज सौम्य स्थिति ही  
प्रसन्नता,  
होती जिसमें लीन  
वह्निजग की विपन्नता,  
प्राणा में  
आनन्द मेघ झर  
बरसाती हो।

क्या प्रसन्नता ?  
फूलों का शोभा प्रफुल्ल मुख  
वे विपण्ण रहते  
तो मधुकर होते उ मुख ?

तुम्हीं मौन प्रेरणा  
गुजरण भर गाती हो !

बाह्य यत्न से  
अत शक्ति  
न होती निर्मित,  
सह सरदान तुम्हारा,  
होती स्वत अवतरित !

तुम्हीं पूणता  
स्वय सतुलन  
भर जाती हो !

वयू चेतन,  
जड, अपूण,  
जजर जग सँडहर  
इसको निज आनद निवास  
बनाओ सुदर ! —

तद्वित स्फुरण वन  
सुम अतर-मय निचलती हो !

पी कटने से पहिले

इंग श हा म  
स ड न इ  
र न मी इ म  
कित दमकन ! —

पी कटने से पहिले

काटो की झाड़ी में  
रेंगे फूल सा कोमल  
जीण रुढि कृमियो से  
विसत भू-अतस्तल ! —

जग मयी,  
जग से अतिराय,  
तुम अपने में स्थित,—  
जन भू ही  
श्री शोभा मगल में  
दिक् कुसुमित,  
ज्याति-गम अरुणोदय  
तुम जग में लाती हो !



(पदार्ह)

मरकत घट में  
माणिक मन्दिर  
सुधा भर जीवित  
मा धरती,  
तुझको करता -  
जीवन - अभिषेकित !

ओ वराग्य विमूढित भारत,  
छान वीन कर  
म समस्त  
आध्यात्मिक तत्वो को  
चिद भास्वर—  
तेरे लिए सुधा सजीवन  
लाया मादक,  
तेर ही चरपा वा रूहा  
पिता म साधक !  
वी पञ्च ते पहिले

मया ह  
सु म  
आ प्रपन  
नि  
दर ल क  
क  
कालान काल  
सु

वी काले ते पहिले

यह नव युग अवतरण सत्य  
उतरा जो भीतर  
स्वप्न शुभ्र आलोक अमृत से  
अतर-घट भर,—

पूण,—छलकता  
सात्त्विक  
रजत ज्वार में बाहर—  
अमृत पान कर  
अग्नि पान,  
ओ मरणो मुख नर !

सत्यो की अवेपी तू—  
यह रस सजीवन,—  
ओ प्राचीन भरत भू,  
सित श्रद्धा कर अपण,—

तत्व पान कर,  
मुक्ति पान कर,  
प्रवयस् जजर,  
काया कल्प समस्त करेगा  
यह वहिरतर !

मरकत घट पी  
जीवन होगा शस्य दयामल,  
माणिक मदिरा  
मन शिराओ म तेजोज्वल  
चित् दोगित  
सचार करेगी  
ज्वाला स्पर्शा,—

पी फटने से पहिले

स्वप्न शुभ्र आलोच  
प्रेम का  
अतदर्थी  
रस समग्र चतय मेरे वन  
भूत जलधि तर  
नयी दृष्टि देगा  
जग क प्रति । —

जीवन इश्वर  
विचरण करता  
तुझे दिखेगा  
फिर जन म पर  
सित अलङ्क रस में लय  
दीखेंग क्षर अक्षर ।  
मनुज प्रीति की  
सुधा पान कर  
मुग्ध विशद जन  
धरा-स्वयं  
निर्माण करेंगे,—  
सजन प्राण मन ।

मनुज प्रीति की  
सुधा पान कर  
मुग्ध विशद जन  
धरा-स्वयं  
निर्माण करेंगे,—  
सजन प्राण मन ।

(सीलह)

तुम्हें सुनहली धूप कहीं?—  
सित स्पर्श मनोहर!  
चपक तन,  
काचन विनम्र  
सौरभ का अंतर!

सखि, अरूप चेतना  
भावना  
देती हो सुख,  
स्वयं चद्र ही  
सौम्य बन गया हो  
जिसका मुख—  
गौर चाँदनी  
ढल कोमल अगो में  
मूर्तित  
सूक्ष्म भाव को  
इन्द्रिय सुलभ  
बनाती हो नित—

तब किसको भाएगा  
प्राण, अरुप, अगोचर !  
किसका स्परा  
करेगा तमय  
रोम ह्य भर !

वही देखमी ज्योत्स्ना  
तन की बनती वेष्टन ?  
स्परा तुम्हारा  
तन मन को  
करता रस चेतन !

क्या न अरुप  
प्रसार  
तुम्हारे मधुर रूप का ?  
व्याप्त धरा में जो जल  
वही न वारि वृष का ?

भाव बतसरे  
स्वप्न भासले,  
म हूँ विस्मित—  
तुम्हें देख कर भी  
क्या देख रहा म  
निश्चिन ?

पी जाने से पहिले

स म ने  
स प नी  
स म न  
स म न  
स म न

पी जाने से पहिले

छूने पर भी  
छू पाता हूँ—  
नहीं मानता,  
तुम अरूप हो  
स्मिते, रूप—  
मन नहीं जानता ।

प्रभे, अरूप  
रूप से पर—  
रस सम्मोहन में  
मुग्ध हृदय  
तुमका पाता  
तमय अपण में ।

(सत्रह)

सित स्फटिक प्रेम,  
मन जिसकी माला जपता,  
स्ववह्नि प्रेम,  
जिसकी ज्वाला में तपता !  
रस अमृत प्रेम  
जिसको उर तमय पीता  
अहि दश प्रेम  
रस गरल बूँट में, जीता !

कवि प्रम-मीठ  
जन भू पर रचन आता,  
मह धया द्वेष भय दग  
प्रम-पद गाता !  
विद्वान् उते  
जग प्रम धाम इदवर वा  
उर आकाशी  
जन भ मगल के वर वा !

वी कन्ने स पहिले

मलता रच न  
स रच न  
लि सा रच  
कमल  
लि स बह  
रच रच  
रच न  
इरा न

वी कन्ने स पहिले

लटकी अनत रस रज्जु  
ऊध्व अवर से  
चढता वह,  
पवडे श्रद्धा आस्या कर स !

भू जीवन निधि हित  
करता वह आरोहण,  
वन सके घरा-मन  
प्रभु के मुख का दपण !

भावना रज्जु दढ,  
सत रज तम गुण निमित्त,  
सित स्वण रजत संग  
अयस-शूल भी गुफित !  
छिदते रस ग्राही प्राण—  
रक्त रजित तन,  
वढ़ता मन अविरत—  
सीती प्रभु करुणा व्रण !

पा सूय लदय  
प्रेरणा दीप्त कवि का मन  
छेडता मुग्ध  
नव भू-जीवन के गायन !  
मागल्य घाम हो  
मुवन घरा रज प्रागण,  
भू जीवन मन हा  
मनुज प्रीति के दपण !

पौ कटने से पहिल



बतर-शोभा से निमित्त भू  
प्रभु का घर  
भौतिक भव हो  
आत्मिक बभब पर निभर ।

रे प्रथम बार अब  
अह भाव केंद्रित नर  
सित प्रेम मूल्य की नीव  
घरा रज पर घर

रचता जीवन प्रासाद—  
खोल लोकोत्तर  
सामूहिक जन मगल क  
स्वग दिगतर ।

जन रागि मनुज-गुण हो  
भू पर सयोजित—  
जीवन ममद्वि हो  
बहिरतर सपोषित ।

जा तम का घर प्रहर  
तन माधारण का  
बह नव प्रमान जागम-शय  
तागन मन का ।

चढता ज्या मन  
झरता भू पर नव जीवन,  
हटता चिन्मय क मुग से  
मणमय गुठन !

जन भू ही इश्वर का आवास—  
न सदाय  
अयय न स्वग, न इश्वर—  
यह र निश्चय !

निमाण करे जग का  
हम पा प्रभु आशय,  
वह प्रेम,—  
कृच्छ भू-स्वग-सजन तप में लय !

पौ करने से पहिले

३० भा १  
१९२०  
मन्ना इ ति  
२० भा १  
मि १० भा १  
३१

(अठारह)

पिर उडने लगा  
सुवण मरद  
चिदवर से वर  
तमय स्पर्शों स  
मन शिराएँ  
कपती धर धर !

उर दह भीति स मवत,  
रोम रस-रूपित  
ओ भाव माहिनी  
मन अज पूण अनावत !

कया करत दृष्टिम  
जप-तप व्रत आराधन  
तुम तन्मन मिन जाम्या पय स  
वर विचरण—

जड को छू  
नव जीवन मे करती चेतन ।

स्वप्ना के क्षितिजा में  
तुम खोल रही उमेषित  
नित नए रूप के अतरिक्ष  
अत सुख प्रेरित ।

उर रूप तुम्हारा घर  
नव श्री सुपमा से वेण्डित  
होता तुममे लय  
रति, समग्र रस अर्पित ।

तुम मेरा तन घर कर  
मन करती मोहित,  
शव बनता शिव  
पा दक्षित स्पश मत्युजित ।

(उत्तरीस)

जहा जहा तुम रखती  
सुभ्र चरण चल —  
भूतल  
वहा वहा हो उठता श्याम  
दूर्वा श्यामल ।  
ज्योतिमय हो उठत रज वण  
तडित रफा स  
मूय चद्र वन —

प्रम

कौन विदवाम करगा  
चिफन कमी नहीं जाना हो  
स्वप्न चरण तुम सजन भूमि पर  
कम करती विचरण ।

निवृत्त उर मरनी में सरनिज  
रूप मष्टि गटना मित मनमिज  
अपिद वर तुमना पावक निज ।

वी कान्ते मे कहिने

सजन चेतने,  
स्वप्ना के तुलते  
अतर में स्वग दिगतर  
अप्सरिया सी उडती  
उन शोभा शिखरो पर ।

गा उडते प्राणो के भुवन अचेतन,  
देवदूत चलते  
मोहित  
मरकत घाटी में प्रतिक्षण ।

जहा तडित्त अगुलि  
करती सित इगित,  
उहा मौन वजती पग पायल  
ध्यान शयित  
जगता अतस्तल ।—

नए सक्षम सौल्य भुवन  
उर मथन से उद्धाटित  
प्राणा मे हो उडते जागत,—  
भाव बोध सपदा  
हृदय मे कर रस वितरित ।

सवेदने,  
हृदय ही मेरा क्यामल भूतल  
सजन भावना ही दूवादिल,  
रूप प्रेरणा  
तडित्त म्पश चल —

अतस ही  
युग बोध तरंगित  
चित सरसो जल !

रति युग प्रीत  
मनो लहरियो में नित  
नील चरण स्मित  
शशि पद चूवित  
भाव कमल अगणित  
अपलक  
धी पद चिह्नो से  
हो उठत प्रस्फुटित—  
प्राण वर उपवृत्त !

मम १  
म  
म  
म  
म  
म  
म  
म

(वीस)

प्राणा की सूदम सुरभि उड  
प्राणा म छा जाती,  
तुम अतर म जाती।

शोभा के चपक मरद वण  
मधुर उपस्थिति से भरते मन,  
कौन मौन गुजार  
स्वप्न मे सी जग  
क्या कुछ गाती।

बुद्धि भूल जाती भव चिंतन,  
भाव पख उडते स्वर्गिक क्षण  
उतर उपाएँ  
नयी चेतना उरम लिपटाती।

स्वर्णिम अकुर-से सवदन  
मन में उगते अतश्चेतन,  
माणिक ज्वाला के चित जल में  
जीवन शोभा हाती।

वी करने से पहिले



श्रद्धा हाती स्वतः समर्पित  
नव आस्था स कर उर दीपित,  
प्राण,

सवगत तमयता जग  
प्राणो में अकुलाती !

निखिल विश्व मन को कर अतिश्रम  
अपने ही में स्थित, चिर निरुपम  
मुक्त परात्पर हृष्य क्षाति  
तुम रोजा में बरसाती !

एव वार पा स्पसा परात्पर  
जनघ विद्व हो उठता जतर  
प्रीति

साय तुम क्षर अक्षर पर —  
रति प्रिय मति न अघाती !

(इक्कीस)

प्रिये,

तुम्हारी स्मृति आते ही  
स्वर्णोज्वल चित् लोक  
हृदय में होता मुकुलित,  
तमय कर सित अतर ।

क्षर पडते मन के सुख दुख ग्रण  
मधु आगम में क्षरता ज्या  
हिमवन का पतक्षर ।

धुल जाती मन से  
जग की रज,—  
ह्लास निशा मे जो जग निद्रित,  
हृदय मुकुर मे  
श्री शोभा जम्लान  
सहज हो उठती विम्बित ।

पो पटो से पहिले

मध पटल स निकल चाद  
 ज्यो इद्र धनुष मडल स्मित  
 लगता शोभित—  
 सूक्ष्म भाव किरणा से विरचित  
 भूति तुम्हारी  
 बरती उर जालोकित !

अतमन की सित प्रतीक तुम  
 वहिजगत में  
 अभी स्थूल छायावित  
 लगता  
 एक अखड श्रणि म  
 भू जीवन में होगी  
 स्वर्णिम सजित !

रस चत यमयी  
 तुम चद्र-तरी हो  
 जिममें तिर मरा मन  
 पान नीलिमानम अनप्रक्षण भरम  
 वहाँ पहुँचता ध्यान लीन  
 मिन प्रीति स्वग में  
 जटा वाम बरती तुम  
 निम्नल  
 प्राण सधा सागर में !

पी कन्ने ते पहिले

पी पाए नि  
 कन न न  
 निम्नल—  
 शक्ति के न  
 स त स क  
 तुम्हारे  
 रस —ने न  
 मर तल सागर  
 श्रम बंधन न

परा चेतने,  
 तन मन प्राणा में  
 विचरे वभव ही से जो  
 प्राण तुम्हारी प्रतिमा करते अचित्त,  
 बाह्य द्योदिया ही में फिर वे  
 मंदिर का अनुमान लगाते  
 गढ़ते मूर्ति  
 वहिर्वैभव पर विम्मित !

शशि शेखर स्मित कगूरे की  
 झलक देख भी ले यदि  
 विद्या गबित,—  
 ओ हिरण्य सौ दय रक्ति गुठित  
 जब तव, जन का अतर ही  
 नहीं तुम्हारे  
 तमय स्पर्शों से रोमाचित,  
 स्वय तुम्ही भाकार रूप घर  
 हो जाओ न हृदय में तदगत अक्षित !

तव तव, अतिमे,  
 जग की भूलभुलया म मन  
 भटका करता  
 बाह्य सिद्धिया प्रति आकर्षित—  
 हो पाता न भाव रति विस्मृत  
 चरणा पर  
 सबस्व समर्पित !

श्री पन्ने से पहिले

ह जतमयि  
जीवन मन के सभी स्तरा पर  
स्पया पा सक हृदय तुम्हारा  
सतत तुम्ही में तमय—  
त्य हो अह रचित जग सारा—  
भू जीवन का सूय दिशा द  
जन प्रागण में  
उतर नव जरणोदय !

सि कन म  
नननन नन  
नन नन न

न न न न न  
न न न न न  
न न न न न

न न न न न  
न न न न न

धो कन्ने से पहिने

ननननन

(वाइस)

किस असीम सुपमा के  
स्वप्न-ग्रथित अचल में  
प्रिये, लपेट लिया तुमने मन ।

द्रुपद सुता का चीर  
रेशमी मसण स्पश की  
सक्षम प्रेरणा से पुलकित कर  
अतश्चेतन,  
मजिन करता  
नव रूपा भावों के वेष्टन ।

ज्यो प्रभात मुख स्मित से  
जग की निखिल वस्तुएँ  
हो उठती श्री शोभा मडित—  
बदल बिद्व ही जाता मेरा  
स्वग चेतना से हो दीपित ।

धो कटने से पहिले

६१

जय इन्द्रिय सुलभ,  
ये इन्द्रिय भुवन  
स्वर्ग के रस पावक से प्राण प्रचंचलित  
वश्य गंध रस स्पर्श शब्द की  
भाव श्रणिया करत नवस्रष्टादित्त ।

सौरभ स आङ्घ्र्य  
सुम्हार सित भुवना की  
निखिल सत्व ही  
स्वर्ण भग सा मम गुजरित्त—  
नव जीवन भगल का मधु  
सचय करन की  
मुष तदगत  
वरता प्ररित्त ।

रम वसत नव आया ।  
प्राणा में सोई समीर जग  
जतर वरती गंध उच्छवसित ।  
जल स्थल नभ में  
नया नाय मीलय  
ह। उटा उवाल पल्लवित  
चिन मरलने  
नए मन्म गवन्दन के स्वर  
व्याप्य मम में पुनजिन ।

स शक्ति वर  
हृदय क वि  
नेत्र ज  
नरत न शर  
न स  
ह शक्ति  
न न

जन प्रतीति चेतन,  
हृदय के सित प्रहप  
सौदय लोक में  
मानव मन हो जागत—  
पतझर वन सी  
झरें विद्वृतिया बहिरतर की,  
प्राण मनस हा सस्वृत !

प्रिय दर्शनि  
भू की बुरूपता मिटे,  
इन्द्रिया तमाना हा विकसित—  
तुममे रह सयुक्त  
मनुज जीवन हो पूण,  
ममद, अखडित !



(तेईस)

प्रिय,

अदस्य चरण चाप सुन  
भू होती तण रोम प्ररोहित  
तो विन्मय ? —

जड रस चेतन  
जीवन सन हात  
पद छ जीवित ।

अवल सा पहरा समीर  
हो उठना आत्म-योष रज सुरभित  
बाग मसृण रूपों स  
पवत यपिन  
मागर चद्र तरंगित ।

निच अग वी भाव गघ  
मन हा उठना भग गुजरित  
प्राग में

स्वगिन ममानन म  
हाना मगीन प्रवाहित ।

रज विवल सन म  
विदा सन ना  
रुद मन्मन्त म  
पान मन्मन्त म  
गो मन्मन्त म  
ईर-मन्मन्त म

मन पत कर  
मन मन्म  
पत म  
मिन मन्म सन म  
रुद सन म

वी कान्ते मे पहिले

आत्मशीलमयि,  
 शोभा वाही में बँध अतर  
 ही उठता रस-तमय, विस्मृत—  
 वह सित विस्मति मुझे  
 सूक्ष्म आनन्द-लोक में  
 बरती जागत !

बदल विश्व पट जाता तत्क्षण ! —  
 विह्व मधुप गाते उ-मेपित  
 लहरें मणि पायल कर अकृत !  
 चद्रलेख भस्तक पर शोभित,  
 उपा लालिमा हो उठती  
 कौमाय लाज से मञ्जित !

काम पान कर  
 अग्नि मंदिर  
 पावन अधराऽमत  
 विश्व सजन स्वप्ना में  
 रहता व्यस्त अतद्रित !

प्रीति लाजमयि,  
 इन्द्रिय तुमको ही पाती  
 रस गंध स्पर्श में—  
 बुद्धि तुम्हें ही  
 भावा में, चिंतन विमथा में।  
 अत स्थित तुम रखती मन को  
 शोक हृष में।

पी कटने से पहिले

अतयुवति,

नया ही मानव बन  
जगता म

तुमम ध्यानावस्थित

सर

नि सीम शांति म सज्जित —

साथक स्वर-संगति म वेधता

भू जीवन

सचपण मधित—

तुमको अपित ।

कुठ मा न  
नेम का  
गिरान्ति  
विजस  
स मन ह  
कर कु  
सा प म  
नत कु

(चौवीस)

बुछ भी नही यथाय जगत में  
तुमस अकल्प, मोहक, सुदर  
किरण-तवि, चेतना स्वण से  
विरचित गोभा-सूक्ष्म बलेवर।

भय सशय ही जाते अवसित,  
इच्छाएँ तुमको पा उपवृत्त,  
स्वग धरा में जो बुछ भी प्रिय  
भाव-तक्षण, तुम उससे प्रियतर।

नही जानता, प्राण, कौन तुम,  
जगती उर में ध्यान मीन तुम,  
श्री सुपमा में तन मन मज्जित  
रम तमय करती नत अतर।

तप्त देह रज, रोम प्रहमित,  
भाव जगत् चित-स्पश सनुलित,  
स्वर सगति में ऋष-से जाते  
अतरतमे समस्त चराचर।

भीतर से तुम समधिक बाहर  
सक्रिय रखती भू-जीवन स्तर  
नव विकास तम को गति देती  
विश्वरूपमयि, काल सिधु तर ।

मन बाहर विचरे या भीतर  
पूष निछावर हो वह तुम पर  
शिव से शिवतर निखर भावना  
भू मगल रत रहे निरतर ।

नसाचिन  
म  
मा कान  
नरक  
बस मा  
रित्तु

(पच्चीस)

सुधा सिंधु में रहती हो तुम  
मये न सदाय  
प्राण, उपस्थिति से ही  
उर का कलुष गरुड गल  
जीवन मगल में  
परिणत हो जाता मधुमय ।

पुरावाल में हुआ  
अमत विप का जब वितरण  
शिव को  
विप को पडा कठ में करना धारण । —  
रहे पथक ही अमत गरल  
दो तत्व सजन के—  
तुमने रूपांतरित उन्हें कर  
जन भू मन में  
दिया विदय को अतरंजय का  
परम रसायन ।

पी फटने से पहिले

कल का जमत गरल वन  
गरल अमत सजौवन  
भव विकास का गौरि,  
वन गया श्रेय सचरण ।

विगत राशि गुण महल क्षुद्र घुल,  
पाप पुण्य धुल  
भू थी शोभा गरिमा मे  
होते रूपायित,—  
ज्योति स्पश पा  
जीवनमयि, वर आत्म उन्नयन ।

धामे

अनल तुम्हारी बाँहें  
अग जग विस्तत  
नख शिख  
आरम नील तुम  
बबल प्रीति अपरिमित—  
रवि गणि दग,—मय वरते दीपित  
उडुपण हार वन पर गौनित ।

म हूँ विस्मित ।—

बया भारत  
युग युग से आत्मनान से प्रेरित  
युग युग से श्रेयस प्रति अर्पित,  
आज अध-संस्कृत जग वा वर  
अध अनुकरण  
हाय छो रहा निज गौरव धन ।—

वी बनते ते बरिते

का १ ३  
न  
अन ३३  
ग  
१४

नर  
१११  
निर नि  
३३५

क्या न पुन विप पी जन भू का  
युग सागर से मथित—  
अमर प्रेम की बाहें खोल  
नही समेटता भू जीवन को  
(जो बहु भेदा में खडित ! )  
अतविरोध कर प्रशमित !

उसे नम्र रहना,—  
विनम्रता आत्मा का गुण,  
भू सकट सहना,—  
जनगण हित जतपथ चुन !

मनुज प्रीति में उसे वाधना  
युग भू जीवन—  
निज दिग भ्रात निकट देशो के  
पूज घणा व्रण !

अणु से कही महत  
आत्मा का बल निःशय,  
(वह ध्वसात्मक,  
यह रचनात्मक)—  
सब प्रेम ही  
चिन्मय आत्मा का गुण निश्चय !

वही श्रेय री शक्ति,  
उसी की अतिम दिग जय !  
दढ आस्था रख  
जन हो निभय !

पी फटने से पहिले



छात्र १  
 कर्त्तव्य रा  
 १५५  
 धन  
 बहुरंगी ५  
 नरकान्त ४  
 धृ

(छवीस)

सधम गध फली अवर में ।  
 मधुर प्रणय की भाव-वदना  
 अंगडाइ लेती अतर में ।

बसी सुरभि तन मन प्राण। में  
 फूट रही तमय गानी में  
 बाहर भीतर व्यया सुनहली  
 छाइ कोकिल मचुकर स्वर म ।

उमडा प्रेम वह्नि का सागर  
 तपते सुख में चद्र दिवाकर,  
 ज्योति सूत्र तुम—  
 गुपी अगोचर  
 स्वग मत्य में क्षर अजर में ।

मूलत रूप - निगल नयन में  
 स्वप्न भुवन बह विस्मित मन में  
 भाव तडित सी प्राण जल में  
 लिपटी तुम उर के स्तर स्तर में ।

छाया बहिरतर सघषण  
 आदोलित जग का उपचेतन,  
 आया भू मानस मयन क्षण—  
 व्याप्त वेदना सचराचर में ।

वहिर्भीत युग मानव जीवन  
 भय सशय से जन मन उमन,  
 गहन व्यथा-तम वन ठहरी तुम  
 अरुणोदय के प्रथम प्रहर में ।

सूदम गध म मज्जित अग जग  
 स्वप्नो से चिह्नित जन भू मग,  
 दौड रही रस भाणिक लपटें  
 जन जीवन की लहर लहर में ।  
 भाव व्यथा से परमे निखरो  
 रूप सत्य वन भू पर विचरो,  
 स्वप्न तरी तुम,  
 पार लगाओ  
 युग मन वस्तु-तमस सागर में ।

○  
○  
५  
○  
~  
५  
।○  
○  
○  
~  
○  
○  
५  
○

म।  
म  
मं।  
के पहिले

पी फटने स पहिले

(सत्सार्धस)

वधि वित्त सौन्दर्य सिन्धु  
सित वाहु पाश म  
तुम रम मञ्जित वरती अतर !  
स्वर्ण हस भरते उडान  
उर अतरिष म—  
जीवन गोभा  
पडती शर शर !

सत्य स्वत ही भाव रूप धर  
तुममें होता गोभा-गाधर  
प्रीति तामय  
रम प्रहय वा स्पर्ग  
प्राण तन मन लता हर !

रौं न्द्र धनुष तूण चुन वर  
कला नीड रचना ही सुखकर,  
जिना तुम्हारी दष्टि रश्मि के  
चित्र निम्न म्बर  
आडवर भर !

बन हि  
स न  
सिद्धि ब्रह्म  
श्री  
द्वयम् क  
पि ब्रह्म  
जगत्सु तु  
शु

फिर भी प्रिय पगध्वनि सुन प्रेरित  
जो अरूप छवि कर छायाकित  
भू पय करते शोभा दीपित—  
उहे सहज मन देता आदर ।

वरस रहा आनद अपरिमित,  
तन मन स्वर सवेदन पुलकित,  
स्वर्णिम अकुर सी तुम शोभित  
प्राणो की भू में रस उवर ।

हृदय सत्य की शोभा प्रतिमे,  
सित अतर प्रहय की अतिमे,  
उतर रही तुम स्वग उपा सी  
दीप्त भाल पर चद्र रेल धर ।

स्वप्न-सेतु रच भाव मनोहर  
विचरण करती वाहर भीतर—  
वितरण कर तुम चिद् रस सपद्  
धरा स्वग को बाध परस्पर ।

○  
○  
×  
○  
○  
○  
×  
○

बर  
गोवर  
स्वा  
र हर  
कर  
वकर  
म व  
स्वर  
भर  
ने से कहते

पी फटने से बहिले

(अट्टार्ईस)

स्वप्न तार सी  
कीन चतना  
छावा पयिदी म रस गुफित ? —  
मम प्रीति क  
अमत स्पग से  
आज हो उठी उर में अकृत !

तन मन क मूत्या म सीमित  
जन म जीवन जजर सडित  
जुगनू वन  
चि-मणि विरीट रवि  
अधकार क्षण  
वरता वितरित !

वः पवन

रज वण वन

लुठिन—

पी कःने से पहिले

वन विग  
छ ह  
म म  
न म  
म म ह  
मृ म  
म म म म म,  
म म म म म  
म म म म म  
म म म म म  
म म म म म

रम समुद्र  
 अञ्जुलि पुट गुठित,  
 तणवत नत  
 हत सत्पौरप वट  
 रेंग रहा  
 वदम में कुत्सित ।

स्वण किरण  
 छू कर जन भ मन  
 भय सशय  
 तम में जाती सन,  
 वस्तु रूप ही सत्य,  
 देह रज  
 आत्मा को करती संचालित ।।

पक्ष घात पीडित मानव मन  
 सत्य न अब कर सकता धारण,  
 पगु आत्म पौरुष  
 लेंगडाता  
 रम अतप्त भव-सत्पणा मर्दित ।

भले विफल हो  
 सूक्ष्म भाव-श्रम  
 बढता शान  
 जगत विवास क्रम,—  
 असफलता ही  
 लक्ष्य सिद्धि की  
 प्रथम सफल श्रेणी—  
 यह निश्चित ।

श्री कटने से पहिले

मत  
 न  
 रवि  
 ।

वन  
 ह—  
 ने से पहिले

(अष्टाईस)

स्वयं तार सी  
कौन चेतना  
धावा पथिवी में रस गुफिन ?—  
मम प्रीति के  
जमत स्पग से  
आज हो उठी उर में शकृत ।

तन मन के मूढ्या म सीमित  
जन म जीवन जजर राडित  
जुगनू बन  
चि-मणि किरीट रवि  
अपकार क्षण  
करता वितरित ।

बल पवत  
रज वण बन  
रुडिन—

धी बन्ने से पहिले

मन ५५  
उ १  
न मन  
न  
कु म ९  
ह  
१। ११  
न-मन ५ ११  
न-न  
न-न न-न  
न-न  
न-न

धी बन्ने से पहिले

रम समुद्र  
 अजुलि पुट गुठित,  
 तणवत नत  
 हुत सत्पीरप वट  
 रेंग रहा  
 वदम में कुत्सित ।

स्वण विरण  
 छू वर जन भ मन  
 भय सशय  
 तम में जाती सन,  
 वस्तु रूप ही सत्य,  
 देह रज  
 आत्मा को करती सचालित । !

पक्ष घात पीडित मानव मन  
 सत्य न अब कर सक्ता धारण,  
 पगु आत्म पीरप  
 लेंगडाता,  
 रम जतप्त भव-तपणा मर्दित ।

भले विफल हो  
 सूक्ष्म भाव-श्रम  
 बढता शन  
 जगत विवाम क्रम —  
 असफलता ही  
 रुदय सिद्धि की  
 प्रथम सफल श्रेणी—  
 यह निदिचत ।

पी फटने से पहिले



नात मुझे,  
तुम सार सत्य सित  
बिम्ब जगत  
तुम पर अवलंबित,  
करकट लती बिदब चेतना,  
एक वस्तु  
होने को अवसित ।

इसीलिए

स्वप्ना से स्पष्टित  
कवि रस मानस  
आज जतद्रित—  
भू मंगल मधु सचय करने  
स्वयं भग  
उर भाव गुजरित ।

कवि का  
कवि का  
सा हृदय  
आ,

(उत्तीस)

भावा की बँट  
सूक्ष्म रज्जु मित  
वाँध रही तुम जन भू मन को  
स्वप्न ऐक्य में,  
प्राण, अपरिमित ।

ग्य हृदय स्पदन स्त्री नर के  
भेद चूण कर वहिरतर के,  
रस स्वर्णिम चेतना ज्वाग में  
भू मन के तट  
करती प्लावित ।

देह भावना रज में सीमित  
राग चेतना मुख अवगुठित,  
सृय स्वप्न से प्राण-यक में  
प्रीति पद  
तुम करती विवसित ।

शो फटने से पहिले

श्री सुपमा के स्वर्ग दिगतर  
खोल हृदय मे सित चिद अबर,  
तुम जीवन का मग्मय आनन  
नव प्रकाश से  
वरती मडित ।

बोन अनाम सुरभि उड गोपन,  
जाने तमय वरती तन मन  
देह प्राण मन की सीमाएँ  
रस प्रहृष क्षण में  
कर मज्जित ।

स्वप्न क्षितिज वरते दग विस्मित  
भाव स्पग प्राणा को पुलवित  
युवति, सुनहल सबषा के  
प्रीति सतु  
तुम वरती निर्मित ।

उर के विलर सभ सजो वर  
भाव श्रखला गड तुम धदतर  
अह मग्न जन कूप वति को  
प्रीति स्पग स  
वरती विस्तत ।

मनुज-मलय ही जीवित इस्वर  
जिम प्रतिष्ठित हाना भू पर,  
गग चेतना व विवाम पर  
भू जीवन विवाम  
अवरविन ।

क  
स  
मि  
स  
तु  
म  
म  
म  
म  
म  
म

(तीस)

तुम मेरी हो,  
हाँ, सचमुच मेरी हो।  
विस्मित मत हो,  
सखी रूप में  
तुम समग्र मेरी हो।

मुझ अधूरा कम ही भाता,  
हृदय पूणता के प्रति जाता।  
तुम्हें प्यार करता म मन से,  
हृदय सखी तुम, बड़ी बहन से।

देह प्रीति से

यह रति ऊपर,  
धीरे ही आस्था होगी  
तुमको चिद गति पर।

निज मन में मेरे संग रह कर  
शुभ्र भाव लहरी में वह कर  
सदाय रहित करो निज अंतर।

पी कग्ने से पहिले

६

८१

०  
०  
५  
०  
०  
५  
०  
०  
०  
०  
५  
०

वर  
दण्ड  
तो

इसकर  
म पद  
पर

करते हैं पहिले

स्वयं ज्योति वा सित वातायन,—  
 खोल रुद्ध भू मन में नूतन,  
 भू विषा म हर जाऊंगा,  
 नयी चेतना बरसाऊंगा !  
 यम सघषण क

जन उर व्रण भर जाऊगा !

आधा घूम तुम्हारे मन वा  
 मिट जाएगा—रज भय तन का !  
 शत प्रतिशत भय सशय  
 तब होगा निर्वासित  
 जब सामाजिक स्तर पर  
 प्रेमा होगी स्थापित !  
 भू विकास की सप्रति जो स्थिति  
 मन स केवल सत्य प्रीति को  
 मिलनी स्वीकृति !

जीवन स्तर पर पीछे होगा  
 बोध प्रतिष्ठित  
 जब भू मानन  
 होगा सच्छुत !  
 गति पात से  
 मन निराएँ हागी सशुत  
 हृदय  
 नयी स्वयिक गोभा गरिमा म स्पदित !

निष्क्रिय गुण विराम मिटगा  
 जीवन मन वा  
 मजन-द्वय म प्रचिन्दि हागा  
 उर जन जन वा !

रु पना  
 नर क  
 का प्रति  
 न  
 हृदय क  
 कल मा  
 नन

नर वपन  
 कल नन क

पी पटवने ते पहिले

सूदम तडित् स जाग्रत हांगा  
निद्रित अतर,  
सन्धिय हागें भू जीवन के  
वहिरनर स्तर।

रह पाएगी नहीं  
मनुज के प्रति विरविन तव  
परा प्रीति में परिणन होगी  
मृत भवित जद।

रहे देह में क्या मन सीमित ?  
खुलें भावना के दिगत—  
आत्मिक ऐश्वर्यों से  
आलोकित।

भू जीवन चेतना अनत—  
न पिजर बद्ध रहे भू मन  
पति सुत परिजन से भसित  
देह भय पीडित।

प्रीति ग्रथित हा भू नारी नर  
काम तमस के कूप से उवर।

विद्व विवास स्वय क्या होता ?  
बीज आप्त नर उयके बोला।  
जो विकाम ध्वज-वाहक होता  
वह भू जीवन साधक होता।

इदवर मुख में होना परिचित  
मित चतय म्पा म दीपित।  
प्रमु स ही पा वह सित इगित  
गुह्य बोध ने मयर-गति नित—

पी कटने से पहिले

नयी दिशा देता जीवन को  
संयोजित कर  
विघटित मन को।

कवि होता सम्राट न  
वह सेना अधिनायक  
होना सित वित रस चातक,  
जन भू उजायक।  
नहीं बदलता वह जीवन को  
मात्र दृष्टि भर देता जन को।

दृष्टि?—चेतना जो नव  
चुपक पठ हृदय में  
विकसित होती शन  
नए युग अरणोदय म।

भाव परलंबित-मुष्पित हीवर  
उर में स्वर्णिम चित सौरभ भर  
श्री गोभा मासल वरती वह  
गत जीवन वन पतनर।

इसीलिए,  
चाहता प्रीति की गुम पीठ बन  
हृदय ज्योति का वरा  
दह रज पर आवाहन।

का हि  
न नि  
दिशा  
न  
का  
न  
न  
न

(इकतीस)

कसौ किरणें बरस रही  
जान किम नम से  
प्रिय-श्री पाटल का मुख  
फालगुन आभा से  
दिखता परिवत !  
गुन्य कुद बलिया  
स्वर्णिम हंसमुख मटल से  
रगता शोभित !

किम प्रेमी ने  
प्यारी पत्नी के बिछोह में  
प्रिय गोमा श्री  
भू परका पर करने अकित  
स्मति-पाटल को जम दिया  
स्वर्गिक मुख सुपमा से बर भूपित ?

पौ करने से पहिले



फूला की पखडियो स रच  
अमर काय सित,  
वानस्पत्य जगत कर  
स्वयं मुकुट से मडित ।

विरव युद्ध को अर्पित  
इसका शांति नाम  
बरसाता उर मे  
शांति अपरिमित ।

अब समझा  
मे विरणों  
गग्न प्रेम की किरणों  
बरग रही चेतना स्वयं से  
जन भू वा मन बरने ।

हृदय चेतन  
सूक्ष्म तुम्हारे अमल स्या से  
हा उठता रज का स्पातर  
तथा तरआ व जग स भी  
स्वर्गीय दीप्तिमा पडती कर-कर ।  
—निमम रट् मकना उमन प्रति  
कन तव मानन अतर ?

गानि चद्रिके  
एक साम्प्रतिक मूय  
अमन होन का निरवय  
तुम्हें कणामयि द  
निज उर निहामन मविनय ।

स न  
स नि  
वि न  
स न

न  
र -  
न  
न गगन  
स स गग

सुं कन गीत

सुं कन गीत

अभी न उस पाटल ने  
जम लिया जन भू पर—  
जिसकी स्वप्नो की पलको पर  
अमर प्रीति की पलडिया खुल  
अत सुदर—

सुधे,  
तुम्हारे रसश्वय के  
स्वण दिगतर  
खोल सकगी जन मन में—  
जग को उपकृत कर।

अत शोभा वा विस्फोट  
ध्रुवण कर नि स्वर  
जाग उठेगा सोया  
आत्मा वा रस अवर।

तभी सजन उवर भू रज पर  
पूण शाति लेगी सित जम  
मूत कर तुमको—  
नस्वरता ही में  
अविनश्वर।

पीस' नामक रोज से प्ररित।

पी फटने से पहिले

(वत्तीस)

बिनती दया द्रवित लगती तुम  
मात प्रकृति बन  
मरी भुटिया  
उर में बरती रहती धारण !  
उन्हे गन कर स्नेह निवारण !

दोषा में फिर  
दोषा स फिर उठ प्राण मन  
दाषा ने ही किया  
बिमाना बन  
मेरा क्रण लालन पालन !  
दुःखताजा से ही म  
निन गकिन खीच  
बड मका निरतर—

यो करने स पहिले

स म गिा  
बनो मी  
नन  
म नना १  
बिना

म स फिर  
बड  
दुःख पुषाण

प्राण, डूबने दिया न तुमने  
 बन असीम सहृदयता मागर।—  
 चिर वृत्तज्ञता से  
 बरबस ही  
 आँसू पड़ते चर झर।

क्या म शिगु से  
 कभी प्रौढ बन पाया?—  
 स्मरण न विचित्र।  
 मा, तुमना करनी थी  
 कितनी सेवा अपित।—

पर, म फिर अब  
 बद्ध बाल बन  
 तुम्हें पुकारा करता प्रतिक्षण।

आ अनत यौवने,  
 तुम्हें! नव स्तय दान दे  
 मूझमें  
 नव मानव आत्मा का करती पोषण।

गाता मेरे गीणित में  
 यह स्वयं स्तय बह,  
 गोभा ज्वाला में  
 हाता रहता उर रह रह।

धी कदने से पहिले

म बन

माल्य।  
 ही म  
 सीब  
 नतर—  
 से बहिले

जी करता  
मन का प्लावन  
घरती पर छाकर  
जतल निमज्जित कर दे  
मनुज क्षुद्रता दुस्तर,  
युग युग का  
कित्खिप विपाद हर !

जन भू जीवनमगल स्वप्नो से ही प्ररित  
अतरतम में  
नया विश्व म करता निमित्त,—  
दोष गुद हो जहाँ न भले  
मनुज का जीवन  
भाव शुद्ध हो  
पर मानव मन !  
दोष प्रगति-सोपान शन  
धन जात सखमय,  
अनध-स्वामयि  
जो अतर तुममें रस-तमय !

लू मनु रू  
प्रा न मन व क्रान  
न १ कान्दहन—  
ग का पहिला  
का शनसा न

## (तीस)

तुम्हें ज्ञात ही,  
 वभी न मन म जाया  
 म हूँ मात-हीन,—  
 दारा सुत दुहिता  
 सखी प्रेमिका से भी वचित ।

रहा सदा उर भाव लीन—  
 मा तुम्ही ज्ञात अज्ञात रूप से  
 प्रीति प्रेम की करती रही  
 हृदय में हो स्थित ।

अब लगता  
 पत्नी सतति प्रणयिनी  
 सखी—सब मात्र  
 प्रीति के लव स्फुल्य भर ।

पी फटने से पहिले

रहने से पहिले

जी वरता,  
मन का प्लावन  
धरती पर छावर  
अतल निमज्जित कर दे  
मनुज क्षुद्रता दुस्तर  
युग युग का  
कित्विप विपाद हर !

जन भू जीवनमगल स्वप्नो से ही प्ररित  
अतरतम में  
नया विषय म वरता निमित्त,—  
दोष शुद्ध हो जहा न भले  
मनुज का जीवन,  
भाव शुद्ध हो  
पर, मानव मन !  
दोष प्रगति-सोपान गत  
वन जाते सखमय  
अनघ-स्वर्गमयि  
जो अतर तुममें रस-तमय !

शुद्ध मन  
अनघ स्वर्ग  
मनुज-  
गति  
सा शान्ता न

प्रति

व-

जीवन

मन।

समय

समय।

(तीस)

तुम्हें ज्ञात ही,  
कभी न मन में आया  
म हूँ मात-हीन,—  
दारा सुत दुहिता  
सखी प्रेमिका से भी वंचित ।

रहा सदा उर भाव लीन—  
मा तुम्ही नात अनात रूप से  
पूति प्रेम की करती रही  
हृदय में हो स्थित ।

अब लगता  
पत्नी सतति प्रणयिनी  
सखी—सब भाव  
प्रीति के रव स्फुल्लिग भर ।

पी करने से पहिले

११

कने से पहिले



तुम नि सीम प्रेम पावक घन,  
जिसकी चिनगारिया नगण्य  
सूय शशि, उडुगण ! —  
दिशा काल मुख  
जिनसे भास्वर !

सब अभाव भर दिए  
रिखन कवि उर क मरे  
तुमन अतुने,  
भाव मनोरमता मे भूतित !  
अमित प्रीति की वाह घेरे  
रहो मुझ-अतरवर पुलकित !

जिस स्पश मिल चका  
तुम्हारी अमत प्रीति का  
एव वार,

उगवा मा  
छाया ही सा पीना नीरस  
लगता अमार ससार—  
सार जिसकी तुम निहपम !—  
स्वय विलय हो जाता  
अह रचित जय का ग्रम !

और प्यार ?

वह वन प्रकाश मार्ग द्वार  
बोलना नित अनत  
गामा न्गित  
अग मम्मूख  
दष्टि स्वन ही मुल  
हानी जनमुख !

वो करने त पहिले

किन्नी शोभाआ में तुम  
 चलती जन भू पर।  
 किन्ने मीन नयन, किंगुव नामाएँ,  
 किसलय अघर, कपोल मुकुर-से  
 भाव मुग्ध रखते अतर—  
 शिगु हस वक्ष, वृदा कटि  
 मासल अवयव गोभा-सगति भर।

खुल पडता मन मजूपा का वेष्टन  
 हीरक मणि सी हृदय मध्य म्यित  
 वरती तुम अग-जग आलोकित—  
 लगता,

तन मन मात्र आवरण  
 तुम्हीं नास्तविक सत्य, स्वधे,  
 जिम पर जीवन अवलवित।

°  
 °  
 ५  
 °  
 °  
 °  
 °  
 °  
 °  
 °  
 °  
 °  
 °

१ द्वार  
 अन्त  
 गिन  
 सम्मन,  
 १ खल  
 नमस्त।  
 करने से रहते

पी कटने से पहिले

(चीत्तीस)

पग पग पर  
मुझस धुटि होनी !  
सूक्ष्म चेतना क्षेत्र  
स्पूल मति  
निज विवेक बल खोती !

ज्योति-स्फा उर करता तमय  
देह भाव-न्तम उपजाता भय,  
पग बुद्धि  
संग्य द्वाभा हल,  
"यया भार ग्रम खोती !

मूल्या वा मवट युग भीषण,  
बौन वर जीवन निर्देगन—  
आमा मन या रज-नन—  
बनी हृदय-चेतना रानी !

वी श्दने ते पहिले

प्रिये, हृदय जग तुममें तमय  
 तन मन आत्मा एक असंशय,  
 उबर जीवन रज में तुम नित  
 नव प्रकाश कण बोती ।

आत्मा के प्रतिनिधि स्त्री-नर नित  
 वह वाय में रह न सीमित,—  
 अनघ प्रीति में वाच देह-मन  
 तुम रज कल्प घाती ।

माव गुड हो मनुज गन हृदय  
 ठहरा नव जीवन अरणादय,—  
 उर्य हृदय में हाती जब तुम  
 देह भावना साती ।

राग चेतना का भव सागर  
 तुमल तरंग मथित जन अनर,—  
 रजन-सीप उर प्रणति,  
 स्वाति जल प्रीति,  
 हंस चित मोती ।

रोती ।

२ वही

धी कष्टने स पहिले

(पैतीस)

दष्टि मुने दी प्रमे,  
देखता हूँ म जग को। —  
वन भुजग-स  
युग भू जीवन  
अथ विकास मग को।

व्यपित न जव,  
जन निविध शक्तिया व  
प्रतिनिधि भर  
भूत भविष्यत में रण  
गुठिन स्वण युगातर।

वमा वितरण  
विषय शक्तिया वा। —  
जग की विधि।  
उद्वलित आमूल  
गरजना  
भुद्ध भव उदधि।

वृमिया-से रंगते मनुज  
पद-दलित प्राण-मन,  
भीतिव तम में  
वह्निभ्रात  
सप्रति भू जीवन ।

भोग लालसा मद विस्मत  
जीवात्मा का वण  
शासित वरता  
अतर को  
आनेस अचेतन ।

कौन वनस्पति  
पापुआ का जग  
शाज सँजोए ?

मनुज प्रेत  
जय स्वय  
मत्यु निद्रा में सोए ।

नहीं जानता,  
जणु हुकार  
भरेगा भू मन

या तुम ला  
जन भू जीवन में  
आत्म सतुलन—

श्रेय प्रेय में  
स्वर सगति भर  
तम अम मोचन

सुखे, बरोगी जन मगल,  
श्री सुख सबधन !

एक हाथ में  
आणव ध्वस —  
अपर कर में घर  
नव चलय सुधा घट,  
स्मेरमुखी,  
हैस निस्वर —

तुम भगुर तम वा बरती  
तम ही से भजन —  
नव प्रकाश का  
पहराए  
जग में जय केतन !

स्वप्न तरणि है,  
देख रहा म  
उठती जन भ  
शक्तता अवर  
नव स्वप्ना के  
पग से वपित  
युग नर अतर ! —

बाह्य ध्वम पट में  
अतमन बरता मजन  
बदल रहा जन  
बदल रहा नू मन  
मव जीवन !

श्री छन्दे से पहिले

३

१०

१०

२५

१०

१०

१५

१०

१०

१०

१०

१५

१०

(छत्तीस)

आज सभी कुछ जग में—

विद्या विभव विलास अपरिमित

सुख सुविधा साधन बहु इच्छित

शक्ति मगल ग्रह पथ भी अजित—

मानव उर में

किंतु शांति सतोप न किंचित ।

सुलभ सभी कुछ—

कही नहीं तुम

स्वल्प हृदय कोने में भी

मा, प्राण प्रतिष्ठित ।

आज सभी तो

दृष्टि हीन विनान ज्ञान,

निष्प्राण, विरम, सी दय म्लान ।—

मानव कर अजित

स्वयं माधना का मणिहार

भुजग बन विपथर

डँसता जग को

दप स्फीत—फुवार मार ।

पी कटने से पहिले

१९

तर !—

मन

मन

व जीवन ।

। कटने से पहिले



जन मागल्य न विश्व बोध में,  
सागिकता ही सत्य शोध में,  
हीन भावना क्षीण प्रेरणा !—  
ऐक्य समकित यदि—  
विरोध में ।

तुम्ही नही जब,  
विजय ह्य क्षण  
सबूत पराजित  
विफल बोध म ।

विशुद्ध दीपित बाह्य विश्व पथ  
रुद्ध तमस स आत्मा का रथ,—  
हृदय ज्योति क विना  
मिल भी कस  
जीवन सागर इति अथ ।

हार गइ हत बुद्धि  
फन मय  
व्यया जवय,  
यन जीवन विद्वय ।

विना लयन के  
पट यजन क्या ?  
विना यजरता  
मजीवन क्या ?  
विना तुम्हारे  
मय ही नह  
प्राण स्वयं का भी प्राणन क्या ।

धी कन्ने स पहिने

सूय नहीं करना जग ज्योति,
 नहीं चद्र ही गीन गन्मि म्मित—  
 बुद्धि प्राण तन मन जीवन की  
 तुम्ही सुष्टि-स्वर-सगति जीवित ।

५

निगिल सत्य की सत्य

ज्योति की ज्योति,  
 हृदय में चिर अतहित ।—  
 तुम्ही जगत् में नहीं प्रतिष्ठित,  
 सम्य जगत् में कही प्रतिष्ठित ।

१०

१०

२५

५०

१०

२५

१०

१०

१०

१०

०

१५

१०

क्या ?

क्या ?

नहीं  
 प्राण्य बना ।

बी रुने से बढि

बी वग्ने से पहि

(सैंतीस)

जिम भू पर  
पगधरनि न तुम्हारी  
हो प्रतिधरनि  
विस्मय बया  
वह आम्नया स  
हा रण गजित ।

यह भौतिक जग  
मर घट भर जा बुभवार वा  
धगा पात्र वट वन  
वन या नुवन प्यार का ?—

घट घट में  
गुरु ग्रन् हो रटा मोन गुजरिल —  
कीन अनाव मनुज में  
वटों मन्मता राटिल ।

स्रान रूढ कर  
भरा रहेगा वही सरावर ?  
अमत मोन तुम,  
जड जग केवल मृत सचय भर ।

४

पा नित मिन चित म्यग तुम्हारा  
भव गव जीविन —  
वहिभान जग  
हृदय ज्योति वचित  
जीविन मत ।

१०

१०

२५

४०

तुम्हें देख कर  
अथ तिमिर बनता प्रकाशमय,  
तुममें रहित प्रकाश  
तिमिर पयाय,—न सगाय ।

१०

८५

५०

१०

बुद्धि प्राण तन मन ही में  
युग मानव मीमित,—  
हृदय हीन,  
आत्मा के स्वर से  
निपट अपरिचित ।

४०

१०

०

१५

१०

आत्मा नहीं प्रकाश माध्य ही  
मन्त्रिय प्रीति अपरिमित,  
सूक्ष्म सूक्ष्म वह  
बुद्धि प्राण मन निगमों गुच्छित ।

पी करने मे पहिले

१०३

गर्जित—

सुरित ।

पी करने से पहिले

वह प्रभु प्रतिनिधि हृदय ज्योति,  
एकता मूर्ति सित  
प्राणारोही बुद्धि अनुभवर  
अह विभाजित !

जिस भू पर  
सित पगध्वनि  
अथ अह पद मर्दित  
वहा अमगल  
लोक ध्वस ही  
समय निश्चित !

प्र

१०

३०

(अडतीस)

२५

नात्र, मन मयूर नात्र,  
प्रणय घटा छाडि,  
विद्युत् अग्नि कालि ज्योति  
उर में लहराइ ।

४०

१०

६५

५०

तोड दिख तमम पाग,—  
जीण शीण हा विनाग,  
प्राणा ने नुद्ध  
युद्ध दुहुमी वजाइ ।

१०

४०

२०

=

तन मन में लयी आग  
जाग, रद दक्षित, जाग,  
दोड रही भाव तप्त  
रक्त में लहराइ ।

३५

२०

ऊत्र दण्डि खुले व्योम,  
जगें सूर्य, जगें सोम,  
हैंसे रोम ज्याति-म्फोत  
तम ने अंगडाइ ।

पी चरने से पहिने

१०५

रुने से पहिने

जीवन मुस हो प्रसन्न  
घाय धाय जन विपन्न  
घरा स्वय मनुज दाय,  
प्रवृत्ति की दुहाइ ।

सदसत मे हार जीत  
डर न जम मत्यु भीत  
ज्योति जषकार दीच  
छिडी फिर लडाइ ।

प्रीति स्पश पा ललाम  
गूय पुन सजन वाम  
लीलामयि वा विलास—  
तम प्रकाश भाइ ।

भा  
फिर

—  
भाइ!

## (उन्तालीस)

और उज्वल, और उज्वल,  
और भी उज्वल बनाओ,  
पक तल में मूल,  
अतस कमल  
चिद नभ में उठाओ।

प्राण सरसी, रति तरल जल,  
तिरे ऊपर भावना दल,  
मधु मरद सुगंध स्वर्णिम  
हृदय पखडिया खिलाओ।

नयन अपलक तवें प्रिय मुस  
ऊध्व अवर और उमुख,  
भव निशा, तद्विल हृदय में  
प्रीति मधुकर स्वर जगाओ।

पी कटने से पहिले

१०७

प्र

१०

३०

२५

४०

५०

६५

४०

१०

४०

२०

२०

३५

६०

पी कटने से पहिले



रदिम कर से दीप्त प्रहसित  
प्राण मन तुमको समर्पित  
धरा पकज पर उतर  
भू स्वग सिंहासन वसाओ !

सूय उर मे, प्रिय तुम स्थित  
चादनी सी शील कल्पित,  
स्पर्श से कर मम पुलकित  
नव विकास दिशा दिखाओ !

(चाळीस)

कितनी सुदर हो तुम,	१०
शोभा के मंदिर सी,	३०
स्वप्ना के	२५
सुकुमार अजिर सी,	४०
चपक फूग के	५०
तनु रसगिम्	६५
गौर शिगर सी !	१०
—परिणत अब हो चुका	४०
स्नेह में सुखमय	३०
गाढ हमारा परिचय !	१५
	८०

सोचा,

जब तुम इतनी सुदर,  
कितना सुदर होगा  
सुदरता का अंतर !

पौ फटने से पहिले

१०९

मने  
मुग्ध नयन डाल  
नयना क भीतर,  
नील कमल उर में  
प्रवेश ज्या करते मधुकर! —

सोचा  
नील मुक्ति में उडकर  
मुक्ता विहग सी दष्टि  
स्वना घोभा में हो लय—  
चूम सक्गी  
हृदय चतना के अवाक  
आरोह अगोचर  
खोल  
कल्पना के मराल पर।

कितु तुन्हारी  
भौहा में बल पड  
दगा स  
फटो जय चिनगारी—  
निरपराध मन  
खोल उठा तब  
बलिहारी!  
बलिहारी!

विमलय पुट की  
हुद मुकुट म्मिनि से निच कर  
मुन पाम ले गया मन विन्मूत  
मधु माणिक घट में धी  
फनिल मुधा धार मिल नि सत—

स्त्री  
म  
ब  
व  
मि

१५  
२।—

पर,  
लीह शालाका से रमितम  
द्रुत कौपे अघर,—  
मुह फेर लिया तुमने  
मुझको कर विस्मित !

प्र

स्वर्णिम कदव फूलो से महु	
उमरे उरोज छवि शिखरो पर	५०
जव मने मस्तक धरा सुघर,—	३०
तुम ज्यो वन पशु को देख तस्त	२५
झट पीछे हट	४०
कुछ अस्त यस्त	५०
फिर मुझको जाते देख दूर	६५
आरवस्त हुइ	४०
मन से समस्त !	१०
हा सध्या को	४०
जव फूल बेलि सी बाहो मे	००
मन क्षण भर बंधने को मचला,	८०
फुकार उठी तुम,	३५
फूल हार वह	९०
फणघर सप पाश निवला !	

सोचा मन ने हैस—  
यही पुरप की प्राण सखी ?  
जो तुमने लीला रच परखी !  
त्वक पिजर भीतर से निरखी !  
तन इसका शोभा का मदिर,—  
क्या अघवार का हृदय अजिर ?

कर  
स्मर,  
, नि सत—  
कदने से पहिले

धी कदने से पहिले

बोला अग्निस्त मन भाव मग्न—

किन रज मूल्यों से प्राण चेतना  
स्त्री की युग युग से कल्पित ।  
बलि पया वह निश्चित  
मान काम वेदी को अपित ।।

प्रीति स्पश से निपट अपरिचित  
भाव मूल्य के प्रति आशयित  
बबल

बबल काम स्पश प्रति जागत ।।  
भर आया अतर  
करण स विमथित ।

ओ गोमा सर की मरालियो  
तुम्ह सौपता मानवता को  
म —मखीदय के स्तर पर ।  
बलि पानु मात्र न बलि यन की  
बनी मानवी भाम्बर ।

नाग रद्ध हृत्प वातायन  
स्वय विरप पाण भूपर छन ।  
मया मयी यन मने प्राण मन  
भावम्पा कर मन उर श्रृण —  
जड निपेप का पाहन ।

अनर जो चित्त वारि गरातर  
प्रीतिमन का मिला घर ।

वी कटने से बहते

सुंदर तन,  
 सुंदर ही जीवन !  
 हृदय प्रीति का स्फटिक-मुकुट,  
 मन आत्मा का सित वाहन !  
 यह साधना धरा जीवन की  
 कवि करता आवाहन !

४

गुंम प्रेम ही मानव जीवन  
 हृदय पुष्प सित करो समपण—  
 ऋचर करे धरा पर विचरण  
 भ कदम हो पावन !

५०

३०

२५

४०

तन न रहो तुम,  
 त्वच न रहो तुम,  
 शोभा के छिल्ले क भीतर  
 भावाऽमृत का हा रम मागर !  
 फूल देह में

५०

६५

४०

१०

फटे स्नह फल,  
 इसमें ही भू मगल !

४०

००

८०

३५

६०

यज्ञ की !

चानक  
 र छन !  
 प्राण-मन,  
 प्रहृष्य—  
 पाहन !

नरोवर  
 का निन धर !  
 की छने से कलि

पी कटने से पहिले

८

(इकतालीस)

य प्रणयी जन

छिप कामना-भुजा में धन  
कीन रस क्या बट्टत गोपन  
भाव व्यया सहित मन ही मन ।

देग बाल से ऊपर उठ कर  
अपन ही पर निभर  
क्या य अभिनव स्वग-सट्टि  
रचते उर भीतर ?—  
स्वप्ना की घर नीव मनोहर ।

स्वान बनी आता कोद जन  
ये नुप ह।  
जाय में बानें बरन तलाग ।

फर दमन अपलक-दम मुन  
मम क्या मुनने का मज—  
विगिनी पान फुल वर आता

चुक् चुक्,  
 इनका ध्यान बटाती,  
 गड भेद कुछ समझ न पाती ।

प

जोडा में वैंट ये प्रणयी जन  
 क्या बातें करते तमय मन ?  
 काल,

उहें सचित कर प्रतिक्षण  
 मानव मन का गहन अध्ययन  
 करते यदि तुम,—  
 तो किम कारण ?

५०

३०

२५

४०

५०

क्या चुन चुन

नव यौवन उर के रस मरद कण

विधि नूतन

सौंदर्य सष्टि गटन को जामन ?

मद मुसकुराते तुम !—

हिल अनुभक्ति बद्ध शिर

इगित करता हौ—

बुछ भी तो अभी नहीं स्थिर ।

६५

४०

१०

४०

००

८०

३५

६०

हाय, दखता म विपण्ण मन,

गोपन वाता में अथ वह

न रहा आकषण ।।

वही न्यो गया

मुग्ध क्षणा का भी मम्मोहन ।

पी फटने से पहिले

११५

नय ।

मुव

क,—

बाती

पी फटने से पहिले



दब, मर गइ पद-नत प्रेमा,—  
आस उठा कर  
दख न पाती वह मरा मुख—  
बधन दुष्कर !

भाव पगु मन  
काट दिए किमने उसक पर ?  
अब न मुक्त उड सकता उर  
छ स्वग दिगतर ! !

कयो न प्रम का रश्मि-स्पश  
नव प्रणयी जन को  
वाल उठा पाया  
रम उवर आवासा में ?  
जहा उच्च वायुए  
प्रजागर रसती मन को ?

कया न भावना-स्वर्गों की  
मुपमा में बलित  
द्व धनप प्रम  
स्वप्न-नीरु जग  
वरन निर्मित

नरा त्रिना उमष तनी  
तग मल धामा में,  
आगावित बरना जा  
मूनम दगित जन का !

स्वप्न सपदा,

मुग्ध भाव ऐश्वय्य प्रहर्षित,

नव रम सवेदना,

सजन प्रेरणा अपरिमित

किसका पा आघात

हो उठी छिन्न भिन्न, खटित,

भू-रुठित !

अह, साप्रत विक्रम नम सीमा !

आज मिचौनी खेल

दिव्य अतर प्रवाश से

आज मूढ ली उसनी

रज-अगुलिया ने घर,

झाक देह की घूलि दष्टि में

भू पर स्वग सजन करने की

क्षमता ली हर ! !

दष्टि अघ, वह वदी अघ

तन की कारा में

रदय म्रष्ट हो

वहला जग का

राग द्वेष पक्कि धारा में !

देह मोह ने, काम द्रोह ने

निमिन किया गगन-पखी हित

स्वर्णम पिपजर

मदाचार की, नीति नीति की

त्वच-तण तीत्री

सँजा मनोहर !

पी कउन से पहिले

११७

प

५०

३०

२५

४०

५०

६५

४०

१०

४०

०

८०

३५

०

ग

म ?

। को ?

। का

वर्णन

ग

निर्मित

वहा

वाता म,

। जो

न वन को !

पी कउने से पहिले

प्राण अनुचर  
बाहर लोक लाज से मर मर  
भू विपाद के दाने चुगता  
वह रस कातर !

शासक स वन गासित श्री हूत  
छाया सा कपित वह पद नत  
मुवत तत्व स बद्ध वस्तु वन  
रघु ससार जोड़ने में रत !

उच्च सत्य आरोहो से गिर  
अवगुणित मुल लज्जा नत सिर  
जीवन का करता कृतघ्न श्रम  
बुन अपन बाहर भीतर श्रम —  
भूल जगत-जीवन विवास श्रम !

आ चिर अतमुवत  
बहा तब वष रहोग  
जब वषन में ?  
य स्वर्णिम ही मही गटन में !

यया विद्राह न गकिन तुम्हारी ?  
जिम पर इश्वर भी बन्हारी ! —  
ताडा माट श्रमला भारी  
—टा जगत् चित गकिन दुषारा ! —  
विचय तुम्हारी !

प्रेम भले वन गया आज हो  
 मोह द्रोह तम काम क्लेश भ्रम,  
 राग द्वेष, भय सशय,—

देखो,

नयी उपाएँ लाती  
 नव जीवन अरुणोदय ।

निज अजेय पखो से फिर  
 स्वर्गिक उडान भर  
 रस क्षितिजो का  
 भाव विभव नव

उद्घाटित कर—

वरमाञ्जो नर नारी उर में  
 स्वर्गिक स्वप्ना का सम्मोहन  
 उपवृत्त करो धरा रज प्रागण,—

प्रीति मुक्त हो विचरे भू पर  
 सजन स्वप्न रत हो जन अतर—  
 देह न हो जट वधन ।

घ

५०  
 ३०  
 २५  
 ४८  
 ५०  
 ६५  
 ४०  
 १  
 ४०  
 ००  
 ८०  
 ३५  
 ६०

मि  
 धम  
 "—  
 म वन ।

।  
 वधन म ?  
 गठन म ।

। तुम्हारी ?  
 तुम्हारी ।—  
 का भारी  
 धक्का तुम्हारी ।—  
 जब तुम्हारी ।  
 वो कदमे वे दहिले

वो पटने से पहिले

११९

(वयालीस)

माता पिता न आना दते ?  
मन ही मन भय-सशय सेते ?

बहते तुम महु क्ली  
जगत बटु बाटा वा भग,  
सोन समझ कर  
अगि पय पर  
रगना होना पग !

बद्र यकिन ही,  
विश्व भले हो  
सत्य की परिधि  
अणु में ही ब्रह्मांड  
दक्षता सभय —  
जो विधि ।

परपरा की  
स्वयं श्रतला म  
जन नामिन

यो बग्ने ते बहिनै

सत्य नहीं सब  
जो कि आधुनिक  
होता भासित !

“प्रेम ?

मूल्य देना होता  
उसको सामाजिक,

मर्यादा तट

लाघे क्षण भावुकता—  
तो धिक् !”

तुम मूझसे पूछती ?—

रिक्त यह चर्चित चवण,

भात्र मुक्ति ही मुक्ति

शेष रज तन तम वधन !

पिंजर बद्ध रहें स्त्री नर ?

यह भी क्या जीवन ?

पिंजर भी तन के तण का !—

बदी आत्मा मन ! !

परपरा ?

यह उसका

मध्य युगी रूपांतर,

अतिव्रम कर

सोमा अतीत की

बढता नित नर !

मूल्य चेतना का बरती

स्थितियाँ निधारित,

पी फटने से पहिले

१२१

स  
शान्ति,  
पी फटने से पहिले

घ

५०

३०

२५

४

५०

६५

४०

१०

४०

००

६८

३५

६

मानव का जीवन मन  
जिनसे होता शासित !

भू जीवन स्थितिया का  
करना नया सगठन,—  
नया मूल्य केन्द्रक हो  
सामाजिक जन-जीवन !

नयी लोक मर्यादा  
इससे होगी विनसित  
वह-मूल्य में नहीं रहूँगी  
प्रेमा भीषित !

काम द्वय ?  
यह निम्न योनि की  
पापु प्रवृत्ति भर  
इसमें दग्ध रहैम  
रस प्रसुद्ध नारी नर ?  
जन्म प्रेम ने अभी  
लिया ही कहा धरा पर ?  
उमक हित  
तप त्याग अपक्षित —  
वह भू इक्षर !

पणा द्वय गच्छन  
उमके हित  
मित स्वर्गिक वर  
तुच्छ देह मन धूमि  
प्रेम पर वरा निःछावर !

मन  
गान्धि!

। वा  
साधन—  
है  
मन-बोधित!

विचरिनि  
ही  
न।

अधिक बंद

निवावर!

वी कल्पे हे पहिले

मदिर हो तन  
प्रेम दीप्त जो हो अम्यतर,  
स्वग धरा पर विचरे,  
साथक जीवन का घर।

निक्लो कूप तमस से  
जीवन प्रभु प्रवाग वर,  
खुला स्वग शिखरो से पर  
आत्मा का अवर।

देह भीति छो  
मनुज प्रीति में वेंच नारी नर  
श्री सोभा मगल का  
सौघ उठा जन भू पर—

वरसाएगे भावा का  
ऐश्वय जनश्वर,  
हटा देह तम पटल  
हृदय के द्वार खोल कर।

कूप वनेगा  
सित प्रतीति रस विस्तत  
सागर,—  
प्रथि मुक्त,  
सहृदय होंगे  
स्त्री पुरुष परस्पर।

य

५०

३०

२५

४०

५०

६५

४०

१०

४०

००

८०

३५

६०

वी कल्पे से पहिले

१२३



(तैत्तलीस)

आओ आओ

महु मुल मुदुला स मुसवाओ !

नव जीवन गिगुओ

जन भू रज

पद विहित कर जाओ !

स्वप्ना व म चरण विह्व स्मित

भू उर गूल करेग बुसुमित

घरती की

जडना का गति ८

दग काल में छाओ !

आओ आओ

नया हाम वरमाओ !

निच्छल स्मित का

स्वग प्रवाग टुटाओ !

नव अक्षरा से रग विमलवित  
 जन प्रागण पतचर हो मुकुलित,  
 स्वण अबुगित हा नव तन मन,—  
 धरा विपाद मिटाओ ।

य

आओ, आओ  
 कोकिल चातक के सँग गाओ ।

आत्म नील  
 स्मित निमल चितवन,  
 कमा लगता  
 प्रिय जग प्रतिक्षण ?

५०

३०

२५

४०

५०

लोट रही मेरी गशव स्मति—

६५

पा अग जग का सद्य परिचय  
 उर अवाक करता मित विस्मय ।

१४०

तितली, जुगनू,

१०

फूल, चाद, जडु

४०

मन में क्या कुछ भरते आगय ।

००

८०

चिडिया के स्वर, रगा के पर—

मय कुछ बना गगता मुदर ।

३५

कितना सम्मोहन था भीतर

६०

कितना आकषण था बाहर ।

बादल, इद्रधनुष, गिरि निम्नर,

इच्छाया के मुक्त दिगतर—

कौन वस्तु थी वह दग गाचर

जो तरक्षण न हृदय लेती हर ।

।  
 मति या  
 न लगती ।  
 तो कबने से लगे

धी बटने ते पहिले

१२५

जाओ आओ

वही दृष्टि फिर लौटा लाओ।  
जग को मन से नया बनाओ।  
नहीं तुम्हारे योग्य अभी जग,—  
बच्चों क्रम विकास का यह मग।  
जीण रुडिया का जड़ पजर  
बंदी कर न तुम्ह—दिता डर।  
इससे पहिले ही—रह तत्पर  
छोहा छेत रहो निरतर।

पिता भविष्य क तुम्ही हो पिता  
तरुण बनोग वाल्य क्षण वित्त।—  
नयी पीढिया को निज योवन  
बद्ध जगत को करना अपण।—  
बल तुम्हारा ही तो क्षोणित  
स्वग अग्नि-नी स तप दीपित।  
मरणो-मुम जग—प्राण दान दो  
निन पीढ्य को प्रथम म्यात दो।

याग करो जन मगल के हित—  
नव भविष्य हा तुमम उपहृत।  
नयी पीढिया अज जो आए  
मग ममान धरा को पाएँ।  
गामा चणे धरा पर जीवित  
अत मुम स हो उर दीपित।  
मनन गानि हा जग में म्यापित  
मनज प्रम में जीवन गानित।

। ।  
। ।  
१५- ।  
। ।  
१३२ ।  
६२ ।  
१५२ ।  
१५१ ।

हिल-  
उपहन ।  
जा आए  
पाए ।  
जीवित  
दीपित ।  
में स्थापित  
गणित ।  
पी कटने से पहिले

आओ, आआ  
जन अभिनदन पाओ ।  
तुम नय जीवन प्रतिनिधि  
भू का उच्च उठाओ ।

ओ अजेय,  
चतय स्फुल्लिग,  
घरा ही क्या,  
तुम स्वयं लोक में भी  
न समाओ ।

य  
५०  
३०  
२५  
४०  
५  
६  
१४०  
१०  
४०  
००  
३५  
६

पी पटने से पहिल

(चौवालीस)

मुक्त प्रकृति क प्राण्य !  
वहुत दिना में मिल  
तुम्हार मोरख दान !

बचपन में हिरना सा चढ  
इन गिरि शिखरा पर  
खला हूँ—प्रिय तलहूटिया में  
लोटे पीटे भर !

कूल उच्च श्रगा म  
गाते फनिन निशर  
मुप बहा न जान —  
उर बोणा बहिन कर !

उतर बालना म गिरिभू पर  
इद्रघनुप मिमन  
स्वय घरा को  
वाँटा में मग्ने मतरजित !

ताली दे-दे वर  
गिरि वालाएँ आनदित  
फहराती निज  
सुरंग चूने-विस्मय पुलकित ।

य

मरकत छायाआ के वन  
अहरह भर मर्मद  
उद्वेलित रहते,  
जलनिधि से कपित थड् थड्-

५०

३०

२५

चलता कथा पर  
क्वियोर कौतुकी समीरण  
उछल मिह सावक सा  
गिखर गिखर पर प्रतिक्षण ।

४०

५०

६५

१४०

जैची ढाला के नीचे  
जल-स्नीत अगोचर  
रेंगा वरते सापो से  
फफकार निरतर !

१०

४०

००

८०

मन अवाव रखतीं  
चप्पी साधे चट्टानें  
खडी सामने निभय  
चौछा सीना ताने !

३५

६०

शग लाघने की  
रहती थी भख डगा को,  
पर पार करते  
सपों से जिह्म मगा को !

गिरि म पर  
निज

सागरजित !

पी काने से रहते

पी काने से रहते

१

१२९

दवदार के हरे शिलर  
रहते रोमांचित,  
सतत सिसकते  
चौडा के सच्ची बन मधित ।

रग पख भात  
भनाल डकिया—बहु हिम खग  
मन में बसता  
हिरन शशक—पगु पक्षी प्रिय जग ।

जया सध्या स  
विचिन था मन वा परिचय  
एक प्रेयमी सी थी  
इतर सखी सी सहृदय ।

एक लाज में लिपटी  
उर वरती छवि तमय,  
माय टहलती साद  
मुख धर छोड - सनाशय ।

अमरा के एश्वय लोक मा  
था नि सशय—  
कीमती वा गुम्न  
स्वय मिरमोर हिमालय ।

जामा की गोभा गरिमा ही  
भूत रूप धर  
रामाचिन रमनी—  
अपन्न स्वर्गिक विन्मय भर ।

वी कन्द से पहिले

का उर  
गा  
गो म  
प ।  
सा न  
थनि  
क  
वृ  
शनि

वी कन्द से पहिले

निर्दिष्ट,

मर्मत।

→ हित ला

ना प्रिय का।

गोत्र का  
निर्धारण—

गौर हिमालय।

मा ही  
मत्र ह्य धर

विन्ध्य धर।

वी फटने से बर्तने

नील विहगम की उडान मा

नीरव अवर

मन को स्वप्निल पखा की

छाया में सेकर—

मोन हिमालय की सन्निधि में

कर अतर्मुख

आत्मा का माक्षात्

कराता, उर कर उमुक्त।

य

५०

३०

२५

४०

५०

६५

४०

१

४०

००

८०

३५

६०

इन आरोहा पर बीते

कितने विनन-क्षण,

किननी गहरी छायावा के

धरे घूम घन।

रजत अनिल पखा पर उठ

माबुक् किगोर मन

टपराता धिर विद्युत

चट्टाना मे तत्क्षण।

धी फटने से पहिले

१३१



जूझ धरा रज के तम से  
 मन का प्रकाश क्या  
 क्या पा क्या दे सका—  
 धाहने का क्या साधन ?  
 सौ सौ मनुजों का जीवन  
 होता कवि जीवन  
 उसके सुख दुख, हानि लाभ, ?—  
 समझ न परिगणन !

पिता वह भ्रमन के  
 राग द्वय के दशन,  
 उसके सृजन स्वप्न सवदन !—  
 ब्रह्मा के धन !

स्वयं भग मा गूज  
 गुञ्ज एकांत हृदय में  
 अंतर को कर लीन  
 लोक हित मथु सचय में—  
 लाल गया अह, निबल पीठ पर  
 म जीवन दुःख—  
 विष उवाला पी  
 बरगाते उर मघ अमत सुत !

प्रभु, भू पर ह।  
 भौतिक आदिमक जीवन मगल -  
 मिनगिरि तेर चरण। पर  
 अपित सुख दुःख फल !

पिता पर  
 आ  
 जीवन म  
 त स्वप्न म  
 रा मा  
 १९९५  
 मय म

पी कान्हे से बहिले

(पैतालीस)

गिरि श्रगो पर भाती आती  
 ऊपा स-याए दिड, नि स्वर,  
 नील गगन से झर झर पडता  
 स्वर्णिम किरणो का स्मित निझर ।

उपा स्वप्न शोभा-ज्वाला से  
 रँग सा देती विश्व दिगतर,  
 एक अनिवचनीय शांति में  
 भाव मग्न हो उठता अतर ।

खग ही गाते ? फल पात तण  
 रज कण भी गाते इगित कर  
 मुझे सुनाइ पडते उनके  
 दिक् प्रसन्न, कपित, नीरव स्वर ।

लिपट समीर लता तर तृण से  
 पुष्पा की मधु रज पी सुरभित,  
 स्वग श्वास सा वहता शीतल  
 प्रति रजवण को कर उभेपित ।

पी कटने से पहिले

१३३

५०

३

२५

४०

५०

६५

४०

१०

४०

००

१

३५

६०

कव  
 साधन

कि जीवन  
 ? ? -  
 परिष्कन

गव  
 हृय म  
 लीन  
 सचप म-  
 पीठ पर  
 डुब-  
 पी  
 अमत सत

हो  
 जीवन बगल,  
 ॥ पर  
 डुब फल

पी कटने से पहिले

भूता का एश्वय  
 जीव जग को भी  
 करता तमय हैपित,  
 गिरि शिखरो का नव प्रभात  
 हरता मन  
 सद्य शोभा प्रहसित ।

गिरि १  
 उरग  
 रा ३  
 ११  
 रत्नमन  
 गिरि  
 साधना  
 म १

साक्ष मुझे पर, अधिक सहाती  
 छाड़ निजन गिरि आगन पर  
 स्वप्ना में सी डूबी तमय  
 दान उतरती वह श्री सुंदर ।

स्वय-नील गरिक छाया में  
 भाव निमज्जित हा गिरि प्राार  
 ध्यानावस्थित सा लगता—  
 अपलन निश्चल अतमुद्य भास्वर ।

रजत-वारि दिन का उडलकर  
 रकिनम ताग्र कल्या सा भास्वर  
 ज्योति निवन अउ ऊन दूब सा  
 करता पश्चिम सागर तट पर ।

प्रशिक्षा करता पथ्यो की  
 प्रतिदिन उद्य अस्त हो दिनवर  
 तम्य यही विपरीत सत्य हो—  
 जन मन बाह्य-बाध पर निभर ।

गिरि टालो पर डलती  
छायाएँ, दिगत लबी काया बन,  
भेड़ो की घटी बजती  
धूमिल तलहूटियों से प्रतिक्षण छन ।

य

वर्हिबभवमय अत स्मित ऊपा-  
सक्रिय तन-भन, जीवन क्षण,  
अतदण्टिमयो प्रौढा सध्या  
मन करता मौन समपण ।

५०

३०

शन अस्त आदिम-सम म जग,  
उदित हुआ वह जिससे निश्चित,  
ज्योति-छत्र सा ऊपर जबर-  
अचल छाया मे शिशु निद्रित ।

२५

४०

५०

६५

साय प्रात, प्राण, तुम्हारे ही  
श्री स्वर्णिम स्वर्णिक तोरण,  
रजत काल करतल पर  
भव गति स्थिति लय नतन की  
तुम कारण ।

४०

१०

४०

००

५०

३५

६०

उल्लकर  
सा भाकर  
डब सा  
१८ तप पर ।

की  
अस्त हो विरक्त  
हो-  
पर निर ।  
भी हबने मे रहते

यो बटने से रहिते

१३५

(द्वितीय)

कसे वरु  
धरा पर तुमको  
प्राण प्रतिष्ठित  
जहाँ प्रीति अभिशाप  
वाम सस  
बहुमुख स्वीकृत ।

ससि, अरुप मरुत स्यस  
भाव प्रतिमा बन जीवित  
नव नव श्री गामा मे  
मन को  
रपता विस्मित ।

अपने ही को छू  
तुम हा उरुनी  
रुपायिन  
रुम ह्य स प्राण  
गूड रतिन्मनि म  
पुलवित ।

वी कने से कटिने

स्वग रश्मि हे,  
 चुना स्वय ही  
 तुमने कदम प्रागण,  
 फूलो के पग  
 शूलो के मग में  
 हँस करते विचरण ।

य

अनघ विद्व	रह	५०
वल्गप	द्रोणी	३०
करती तुम	नित पावन,	२५
रोमांचित	रज	४०
चरण	स्पर्श से	५०
वनती मरकत	मणि घन ।	६५
		४०
प्रेम नाम की		१०
प्रतिभ्रिया	ही	४०
उपजाती	अविदित भय,	००
सुधा गरल का,		८०
	गरल सुधा का	
अव	पयाय, न सशय ।	३५
		६०

तामस मदिरा पी  
 युग - मन  
 करने को भू-जीवन क्षय,  
 दिय दृष्टि से  
 देख रहा जय  
 काल पुन वन सजय ।

पी करने से पहिले

१३७

को  
 छिन,

स्वीकृत ।

छ  
 हो उठती  
 हृगदिन,  
 प्राप  
 न्मति स  
 पुलकित ।  
 पी करने से पहिले

जो कलक तम मोचक  
उसस होता  
जगत कलकित,  
कस कर  
धरा पर, श्रद्धे  
उर की ज्योति प्रतिष्ठित !

कर रह भ

धरा \*

१३८

वी काने न पहिने

वी काने से पहिने

नन्द,

प्रिय!

य

(सैंतालीस)

चादनी सी देह	१५०
वाहो मैं ममेटे	३०
सोचता मन भाव कातर—	२६
कौन सूक्ष्म सगध	४०
करती प्राण तमय—	५०
राग कर से छू निरतर ।	६५
खुल रहे मन के दगो मे	४०
स्वप्न पखी	१००
नयी शोभा के दिगतर,	६०
घरा से उठ चरण मन के	३५
लोट आते,	६०
पार कर रस मुक्त अघर ।	
प्राण,	
कसे मूत होगी	
घरा रज में	
स्वग सुपमा,	
भाव रस अतिमा मनोहर ।	

पी फटने से पहिले

१३२

पी फटने से पहिले



किस अहता दस से  
जाने प्रवर्चित  
भाव बुद्धित, मोह मूर्छित  
मूढ स्त्री नर ।

स्वामिमान भले महत हो  
वतमान विकास स्थिति म  
कूप जल मडक वत ही  
आत्म रति सकीण अतर ! —  
प्रीति श्वासा सच्चि की —  
सित भाव रस अपित हृदय ही  
पार कर पाते  
अनास्था उदधि दुस्तर ।

ज्योति को घातक तमिस्र  
तमिस्र को ही  
मानता जग ज्योति भास्वर —  
मोह रज दुग्ध पर ही  
काम दम्भ  
दरिद्र नर-नारी निष्ठावर ।

बान्नी सी  
तुम हृत्प में हो गमाइ,  
स्वय को मिल गय  
बटनी भाव जग में  
मुक्ता पर घर

अमित आम्ना मुझे—

दान विकास श्रम में

सूक्ष्म की होगी विजय

मा, स्थूल पर,

तुम मनुज को दोगी अभय,

दे ज्योति प्रीति प्रतीति का वर।

न्य

२७ ०

३०

२५

४०

५०

६५

४०

११०

४०

१००

६०

३५

८

स

१० भाव्य—

निष्ठार!

समाप्त

म

८ वर्ष

वी कल्ले के रहने

पी पठने से पहिले

१५१

(अडतालीस)

कम बढ़ें ?

क्या गोपन !

मुम व्यया जगत को होगी !

जा अमूल्य मणि

उस तुच्छ

जग क मूल्या पर लोभी ?

बिना वह ही

भाव-गध जो

फर गइ अग जग में

मूर्ख मुरनि उट

समा गइ

भू जीवन की रग रग में ।

तार नहा

तरेर रह

मुपना मो मो भू-गान,

पी छत्रे ते पहिरे

कही खोज दू  
म न हृदय में  
स्वग ज्योति वातायन ।

और कही  
सचमुच उचार दू  
मुह से ढाड़ अक्षर,  
कोलाहल  
मच जाय,—  
रजाए अणु विस्फोट भयवर ।

लोग नहीं  
विश्वास करेंगे,—  
सत उठ गया मनो से  
काली घणा  
वरमती भू पर  
सशय धूम घना से ।

हीरक नीलम स्रक्  
चितववरा  
साप वन गया भीषण,  
मणि अगार,  
अमृत विप,—  
कुठित काम-अघ जन भू मन ।

मात्र काम  
भावाय प्रेम वा,  
प्रहर ह्लास वा निश्चय,

न्य

२५०

३०

२५

४०

५०

६५

४०

११०

४०

१००

८०

३५

६०

श्री मन्मथ,  
श्री कटने से पहिले

श्री कटने से पहिले

१४३

(अडत्तालीस)

कमे कहूँ ?

कया गोपन !

मुन ब्यथा जगत को होगी !

जो अमूल्य मणि

उस तुच्छ

जग के मूल्या पर लोगी ?

बिना कहे ही

भाव-गद्य लो

फल गइ अग जग में

मरम मुरभि उट

ममा गद

मू जीवन की रग रग में !

तार नहीं,

तरर रहे

मुचका सी सी मू-लावन

वही खोल दू  
म न हृदय मे  
स्वग ज्योति वातायन ।

और वही

सचमुच उचार दू  
मुह से ढाड़ अक्षर,  
कोलाहल  
मच जाय,—  
लजाए अणु विस्फोट भयकर ।

य

लोग नहीं

विश्वास करेगे,—  
सत उठ गया मनो से,  
वाली घणा  
बरसती भू पर  
सशय धूम घनो से ।

२५०

३०

२५

४०

५०

६५

४०

११०

४०

हीरक नीलम ख

चितववरा  
साप वन गया भीषण,  
मणि अगार,  
अमत विप,—  
बुडित काम अघ जन भू मन ।

१००

६०

३५

६०

मात्र काम

भावाथ प्रेम का,  
प्रहर ह्रास का निदचय,

सो मनोवत  
पी कदने से पहिले

पी कदने से पहिले

मोह निशा  
बीतगी ! —  
होगी हृदय ज्योति ही की जय ।

मध्ययुगी  
तम कूप वृत्ति यह,  
इसमें मुझ न सशय,  
प्रीति रश्मि को  
विदर सचरण वन  
हरना जन भू भय ।

हृदय युग! स  
हीन व्यक्ति ही  
भ विनाम अवरोधक  
प्रीति ज्योति स  
रिक्त काम तम  
विदर हास वा बोधक ।

उद्वेलित ही भर  
राग यमुना वा  
सागर-मलय  
मन वाण्य पण  
पुन तापना  
नव युग को नि सगाव ।

स्वप्न मयी,  
हम मनुज हृदय को  
प्रम निवाग बनाएँ,

जीवन दाहक  
काम अग्नि मे  
मजन मुग्धिन जन पाएँ ।

हो बीब!

पह,  
न सघन

वन  
नम मय!

उ  
न का  
गरमव्य,  
कथ  
न  
नो नि सघन!

दय को  
नवाप्त बनाए,

स  
जन पाए!  
पी करने के पहिले

न्य

२५०

३०

२५

४०

५०

६५

८०

११०

४०

१००

८०

३५

६०

### (उनचास)

आज खुल गए हृदय द्वार,  
सखि, उमडा चित ऐश्वर्य ज्वार !  
एक अनिवचनीय  
स्वप्न सौंदर्य भुवन  
हो उठा स्फटिक क्षण में साकार !

बदल गया हो जग का आनन,  
हिम आरोहो पर फहराते  
फाल्गुन स्वर्णाभा वेंतन,  
भू के घूर्णित कणों में अंगडा  
उगते मानिक-अकुर चेतन !

गूँज उठी है

स्मित मरवन घाटिया  
हुँसे नीरम जीवन-क्षण !  
रुद्र खुल पड़े हृदय-द्वार  
हर उर का मोहित भार !

पौ पटने से पहिले  
१०

१४५



प्राणा की घोषा वा  
 चपक-गौर वक्ष जो  
 मेरी दृष्टि  
 लुभाए रहता धरवस,  
 उस पर स  
 अब रूप मोह वा  
 सरक गया  
 सहसा अचल सस —

सूक्ष्म अनावत सुपमा का  
 नव अंतरिक्ष अब  
 उर की आरा में उद्घाटित,  
 छिन्न भिन्न  
 प्रेरणा समीरण स  
 जान बच  
 मनोवाप्य मव हुए पराजित ।

गुंभ चेतना वा मुक्ता घट  
 झुक उडग्ला हीरक आमा  
 प्राणा की घाटी में उतरी  
 भाव तन में लिपटी दामा ! —  
 मुक्ता जामा वा प्रमा ।

वध प्रम की तमपत  
 आनन्द तन्त्रि चुपन तुम गापन  
 अमित तुम्हारा मित आरगण  
 नीच जाम-नर बाध म पर  
 त्रिम अगाव  
 चेतना तान में ज जाना मन —

जो

। बरतन,

० सन—

मति न अघाती

पी उसके

चित् रस सवेदन !

इसी बोध के

नव आस्ये,

ला प्रीति-स्पर्श क्षण

धरा पीठ पर

नरो अवतरण !—

उपहत हो ससार !

न्य

२५०

३०

२५

४०

५०

६५

४०

११

४०

१००

५०

३५

६०

।

तुम मोहद

जाग्यम

पर बोध स पर

में ल जाता मा—

तो कटने से पहिले

पी फटने से पहिले

१५७

वि. ७  
कृ.  
मन्व.  
२. ति  
१७ शत  
२४५५  
१६११

(पचास)

कस चित शोभा  
छायाकित वरुँ  
लोक दपण में?—  
श्री सुपमा की  
तमय अतिमा  
जन भू जीवन मन में।

बने उरोज गिबर ही  
अव युग-बोध क गिबर  
युग नितन गोरगध  
योनि आगन ही  
जीवन अजिर—  
लोक-मन दुम्बर।

विपर मद्र गन मनुज हृदय की  
दवी सपन भाम्बर  
नया हृदय हाग्टा दय,  
नव प्रीति-म्बलन म्पलन मर।

निलर रही दग सम्मुख तुम  
 सी दय शिखा सी नि स्वर,  
 काम शलभ छवि दग्ध,  
 प्रीति ली से दीपित अब अतर ।

न्य

खुलत अक्षय सूक्ष्म चेतना भुवन  
 चक्षित अतर मे  
 दह मोघ-क्षण लीन  
 प्रीति रति के अकूल सागर में ।

२५०

३०

लोट रहा आनद स्वग  
 सित श्री शोभा चरणा पर,  
 जी उठती भू-रज पद छूकर  
 हँस सुमना मे सुदर ।

२५

४०

५०

६५

कसे दिखे अगोवर सुपमा  
 शब्दो के दपण में?—

४०

११०

भाव ग्रहण के लिए  
 सूक्ष्म अनुभति  
 चाहिए मन में ।

४०

१००

८०

३५

६०

गोभा  
 वन वर  
 दपण में?—  
 की  
 नमय अनिसा  
 जीवन मन में ।

मनज हृदय की  
 सपन भावद  
 उदय,  
 स्वप्न स्वप्न अर ।  
 तो कहे है गीते

धी कटने से पहिले



निलर रही दग् मम्मुव तुम  
 सी दय शिसा सी नि स्वर,  
 काम शलभ छवि-दग्ध,  
 प्रीति ली से दीपित अव अतर ।

न्य

खुलत अक्षय सूक्ष्म चेतना भुवन  
 चकित अतर मे,  
 दह शोध-क्षण लीन  
 प्रीति रति के अकूल सागर में ।

२५०

३०

लोट रहा आनद स्वग  
 सित श्री शोभा चरणा पर,  
 जी उठती भूरज पद छूकर  
 हँस सुमनो मे सुदर ।

२५

४०

५०

६५

कैसे दिखे अगोवर सुपमा  
 शब्दों के दपण मे ?—  
 भाव ग्रहण के लिए  
 सूक्ष्म अनुभति

४०

११०

४०

१००

चाहिए मन में ।

८०

३५

६०

शोभा  
 गकित वृद्ध  
 दपण मे ?—  
 मा की  
 समय अनिमा  
 जीवन मत मे ।

पनब हृदय की  
 सपना भाववद  
 ता उदय  
 स्वप्न स्वप्न धरा  
 वो हलो के रति

पी फटन से पहिले

१४९

(इक्यावन)

बिसने वहा कलकित  
इन्द्रिय जीवन प्रागण ?—  
दह चतना पावक ही की  
जीवित सित कण !

स्वय विम्व ही स उपजा  
भ जीवन निरक्षय,  
रगु-भात्र में भरा  
वही पीयूष असणय !

अज भी भ पर मँडराती  
निव सुपमा छाया  
स्वप्न-भरा उडनी अगात्र  
महीमय वाया !

गय प्रीति मस की  
माँमा में वमनी अगय  
आरमा का गिन गोरभ,—  
अतर स्मति-भरा तमय !

अब भी दे  
मदार लता - बाँह आलिंगन  
भाव योवना  
अप्सरिया सी हुरती तन मन ।

स्वगगा लहुरा पर उठ गिर  
स्वण कलश स्मित  
प्राण चेतना सरिता - जल कर  
राग उच्छ्वसित—

न्य

राज मराला मे	३०
उडान भरते मानस में,	२५
डुगा कल्पना का	४०
अनिच्छ श्री सपमा रम में ।	५०
देव दनज पशु	६५
हुए मनुज म पूण समचित	४०
मानव इन्द्रिय-जीवन प्रिय,	११ -
संग ही इन्द्रियजित ।	४०

रग लते, कहता यह कौन	१००
मही तुम भ पर?	८०
उतर प्रेरणा पत्वा पर	३५
पुलकित कर अतर	६०

रज तन को छ करती तुम  
रम चेतन, पावन  
वाहित कर चेतना गगन में  
जड को तरक्षण ।

पी कग्ने से पहिने

१५१

मडरानों  
छाया,  
। अज्ञान  
काया ।

नी  
बगती बगद  
। सौरभ—  
। सख तनय ।  
सो कग्ने से पहिने



काम नहीं रज तन गुण—  
स्वर्ग स्रष्टि वा कारण,  
तुम उमको निज स्वर्ण योनि में  
करती धारण !

सजन-स्पर्श स जग उसके  
जड बनते चेतन  
वह आत्मा का पावक  
पावन जिससे मद तन !

भाव-शुचति हे  
तुम आत्मा की रस प्रवास,  
ह्लादिनी तडित घन  
पावक शक्ति—निलरता जिसम  
तप मन काचन !

जड चेतन से परे,  
प्रेम-परिष्णीत—शाश्वत  
श्री सुपमा मगलमयि—  
उर पद पद्मा पर रत !

मत्त बन  
१  
२ ५  
३।  
४  
५।  
६।  
७।  
८।

न्य

२५०

३०

२१

४०

५०

६५

४०

११०

४०

१००

८०

३५

६०

(वावन)

क्षुधा काम को  
मानवीय गौरव दा भू पर,  
रज वदम में,  
वृमि से डवे रहें न स्त्री-नर ।

इश्वरीय सचरण प्रेम का  
हो दिग विस्तृत,  
क्षुधा काम की पीठ  
घरा हो रम-मयावित ।

कवि उर मानव प्रीति स्वाति का  
सित रम चातक,  
लोक भावना की  
विक्रम पदार्त का स्नातक ।

हुत प्रतीक स्त्री,  
मनुज हृदय का वह धाराधक,  
आत्मा मन ही नहीं,  
घरा-जीवन का साधक ।

श्री कान्हे से पहिले

१५३

रस प्रसाध  
र धन,  
निवृत्ता किन्न  
भावन ।

पर,  
—पादक  
मयि,—  
ग पर ल ।

श्री कान्हे से पहिले

भाव प्रियाएँ कवि की  
 सब जन भ की नारी,  
 कवि मन जीवन - शोभा  
 मंगल का अधिकारी ।  
 प्रेमा की सित रश्मि  
 सयमित करे लोक मन  
 लक्ष कुटुंब से महल  
 मनुज जग का आकषण ।

१ वन  
 २ शी  
 ३ न न  
 ४  
 ५ सर हू  
 ६ मत का  
 ७ स्वयं म

हैंसते फल चहवते रग  
 अलि भरत गूजन  
 सजन काम रम-त-मय हूँ  
 स्त्री-नर उर-स्पदन ।

स्वप्ना क गोणित स  
 मन गिरा हा प्ररित  
 गाभा ही स्त्री पुष्प प्रेम  
 रज राम प्रहपित ।

भू पर विचर  
 मानव उर में वदी ईश्वर  
 मवन प्रम क पग घर  
 जन मन का सम्युत कर ।

क्षया काम भी रहें  
 कुटुंबा में लघु सामिन,  
 स्वय प्रीति मे  
 मानवना का मृग हा शरपित ।

गाथा  
 ॥  
 लोहम,  
 आरपन।

भ जीवन हो  
 प्रीति चद्र चुवित  
 रस सागर,  
 उजत शोभा ज्वार मथित  
 अतर्मुल भास्वर ।

मनुज हृदय ही हो  
 मानव का भाव दीप्त घर,  
 अतर्वेभव में समद,  
 वहिरतर सुदर ।

वधू तुम्हे रचना भ गह  
 तन मन कर अपित,  
 भू अप म सन कर ही  
 होगी तुम अकलकित ।

सित पवित्रता वह्नि  
 हृदय की ज्योति आतरिक  
 धिक उनको,  
 जो उसको  
 त्वक सीमित रखते - धिक ।

न्य

२५०  
 ३०  
 २५  
 ४०  
 ५०  
 ६५  
 ४०  
 ११०  
 ४०  
 १००  
 ५०  
 ३५  
 ६०

- कौ ईस्वर,  
 पग घर  
 सरकृत कर।  
 रह  
 लय सीमित  
 हो दीपित।  
 भी जाने ने लने

पी पटने से पहिले

(तिरपन)

तुम्हें पक मे उठा प्रिय  
मन हृदय स्वग म  
वरता स्वापित।

कौन ररिम  
जाने उर को छ  
दिय रूप वरती उद्धादित।

स्वाथ वर स्वर्णिम जग पिजर  
यनी तुम, जीवन मन जजर,  
पग पग पर  
गविन निज प्रति उर,  
रुति रीति तम से  
चिर प्रामित।

मरल धान की सी वाली तुम  
स्वयमवि श्री गामागाली तुम  
निडर क्षुधानुर वय धरा पर  
भाव जना  
भव पया तादित।

पशु बल का भू पर सघपण,  
संस्कृत हो नर—दूर अभी क्षण,  
अधकार चलता धरती पर  
जग जीवन  
लगता अभिशापित !

1-न्य

देख रहा म, भू निश्चेतन  
भरता जो फूलकार उठा फन,  
सुन वशी ध्वनि अतरिक्ष म  
सपन नत्य रत,  
प्रणत, पराजित !

२५०

३०

२५

४०

५०

६५

४०

पी फटने का पूव प्रहर यह  
गहराता अतर तम रह रह,  
हृदय क्षितिज मे उदित हो रही  
तुम क्या सी

अप्रत्याशित !

११

४०

१००

८०

३५

६०

काम दग्ध न रहेगा अतर  
स्वग प्रीति विचरेगी भूपर  
इश्वर हो रस मूत सट्टि म—  
यह विकास नम म  
निर्धारित !

तुम्हीं सूक्ष्म आत्मा जीवन की  
हृदय ज्योति श्रद्धा नत मन की  
भाव मुक्ति तुम,  
भू पर जीवन मगल स्वग  
करो रूपायित !

१५७

का पित्र  
मन चक्र

प्रति उर,  
तम स  
चिर शक्ति !

सी बाली त-  
ोमाशाली तुम,  
वय धरा पर

क्षया ताडित !

पी फटने से पहिले

पी फटने से पहिले

(पचपन)

सपन क्या

जगती रहती!

तुम्ही हृदय वन

बिंदव चरना दशन

प्रतिक्षण सहती!

मनज हृदय अवरोध

युगा स मपपण रत

यथा वर मर वह

आत्मा वा स्वर्णिम अभिमन!

जन्मनाम

भाव प्रवण वृत्ति वा उर रहती!

वम हो भू जीवन बुनमित

विन्द मध्यता ममृति विवमित

नर नामा मगल प्रप वा मनि

हृदय ती न दिग्द—

चतय ज्यानि रम वचिन्—

वृत्ति को रम मित प्राप्ति रहती!

जो अदम्य, अविजेय शक्ति,  
 तुम भूमि-कपवत्  
 भाव जगत कर मथित,  
 जीवन में होगी अभिव्यजित,  
 भू विरोध कर प्रशमित ।  
 गुहा, प्रचंड, अवाध वेग से  
 तुम अतर में बहती ।

।न्य

भू जीवन प्रतिनिधि कवि-अतर,  
 तुम हूत तभी रस झटूत कर  
 रचती नव चतय-स्वग  
 ढल स्वर-सगति में महती ।

२५०

३०

२५

४०

५०

देख रहा कल्पना दृष्टि से  
 अतर रस चतय वृष्टि से  
 मनुज अहता रचित सृष्टि की  
 रुढ़ि अध बाघाएँ ढहती ।

६५

४०

११०

तुम विनाश के भीतर सजन  
 करती भर रस चेतन गजन,  
 जग के उल्लंघने ताने बाने  
 फिर निज कर में गहती ।

४०

१००

८०

३५

६०

हनी ।

बुलमिनि  
 ति विक्रमिनि,  
 प्रदप वा सोम  
 ो निरुद्ध—  
 न बकिव ।—  
 रसित प्रसा कही ।  
 दी कने से गीने

धी कटने से पहिले

११

१६१



(छप्पन)

तुम इतनी हो निवट हृदय के  
भूल तुम्हें जाता मन  
प्राण इसी से राग द्वेष का  
जीवन बसता प्राणण ।

चिद दपण सी तुम चिर उज्वल  
जिसमें अपना ही भूख  
एव मनुज

महता भव सुख दुख—  
प्रणल आरम गम्भीर ।

दलदण मधमता ही में अपनी  
तुम मोह सी रहनी  
याप्त चतुर्द्वि—  
मात्र तुम्हीं सब  
जिसको मति जग मही ।

ओ अनाम सौरभ,

उर अनुभव करता

मौन उपस्थिति,

तुम्हें बाध न करता न

स्वयं बंध जाना

पावना उ स्थिति ।

न्य

रति, अल्प सुपमा गरिमा से

भर जाता नत जतर—

गोचर गामा ने जिमका

सम्पन्न प्रहृष्ट गहनतर ।

२५०

३०

२५

४०

तुम्हीं हृदय स्पन्दन बन गानी

प्रति रस गाणित वण में

सजन चेतना बन

स्वप्ना का रूप मँजोती मन में ।

५

६५

४०

११

४०

भावा की जिन स्वण-श्रेणि पर

करता उर आरोहण

वे पग होते, प्राण तुम्हारे,

रहस्य-श्रणि भी गोपन ।

१००

५०

३५

६०

तुम होती

प्रदग्ड प्रोप

हो उठता वरामल्लवत,

तुम्हीं मत्त हो,

रूप-मुरुर भी

वस्तु विम्ब भी शन गत ।

ही म अपनी  
भी रहती

—

। सब,

। जा वही।

की कने व लीके

पी पटने से पहिले

१६३

रमे,

निकट भी दूर,  
दूर भी निकट,  
अगोचर प्रतिक्षण  
गोचर प्रतिक्षण में तुम—  
निश्चय अवचनीय  
सच्चिद् घन !

मत

या न

कति

(सत्तावन)

गात मुझे	२५०
विद्वेष मिथु क्या	३०
जन भू मानस में उद्वेलित! —	२५
यग मन के	५०
चैतय शिखर पर	६५
प्राप्ति ज्योति तुम हूँ अवतरित!	४०
	११०
आदालित भव ह्याग निशा तम	४०
छाया उर में भय, सगय, भ्रम	१००
यह निश्चय नव जीवन उपक्रम—	६०
अघटित होना घटित—	३५
न जल्पित!	६०
जग वा जड अतीत मरणोमुख,	
देग रहा कवि उर अतमुख,—	
राग द्वेष, आगा नय मुक्त दुख	
प्रगति चिह्न—	
भू पय पर अक्षित!	

पवराया गत जन भू वा मन  
जिसक मत प्रतीक द्वेषी जन -  
करता नव चतय सक्रमण  
एक वत्त  
संस्कृति का अवसित !

जित्हे मिला महिमे प्रकाश वर  
सजन-स्वप्न रत उनका अतर -  
सूट विद्वेष घणा तम के गर  
जीवन मगल प्रति  
वे अपित !

वाटा ही वा मुगुट पहल वर  
स्वग द्रुत आत जन भू पर  
सिधु विरय-सधपण का तर  
भू जीवन का  
करते उपटन !

जन प्रवाग-तम प्रतिनिधि भू जन  
मुद-भान युग मन वा प्रागण,  
विद्वमित हाना विरय सररण  
विजय जयानि की  
तम पर निगिना !

जन  
1

रा  
न  
मि  
न

वी रता त वरिणे

पी छन के

(अष्टावन)

युग नर के मम्मूख दारण रण ।  
गग चेतना मे रस प्रेरित  
उद्वेलित जन भ उपचेतन ।

उतर रही रस ज्योति धरा पर  
नम स्वप्ना से उबर अतर,  
मज्जित करता भू जीवन तट  
नव श्री सुपमा का मित प्नावन ।

वमन कर रहा भू निरचेतन  
बट्टु कुठा बदम तम प्रतिक्षण,  
नय सगय मे मर्दित भू-मन  
क्रुद्ध उगलता विप पावव वण ।

हृदय प्रकाश जयर रम भास्वर,  
डधर देह रज तम का सागर  
वाम भीति में भाव प्रीति में  
छिडता जव भीषण सघपण ।

२५०

३०

२५

४०

५०

६५

४०

११०

४०

१०

८०

३५

६०

पहन कर  
जनम पर,  
वा त  
जीवन को  
बल उपहन।  
म जन  
का शाना  
विरत सवप  
म ही  
पर निरिका।

नही पूणता प्राप्त कल्पना  
स्वग स्वप्न भी रिक्त जल्पना,  
प्रीति रश्मि को भान भूत हो  
जन भू पय पर करना विचरण !

कमी कूप तम में भय कुठित  
हृदय ज्योति रह सकती गुठित ?  
श्री गोभा सुख स्वग वनेगा  
निश्चय मण्मय जन भू प्राणय !

हिम गिरि ढाला-से सित नि स्वर  
स्फटिक भावा के चिद अवर  
जगते—इद्रधनुष स्मति रजित  
स्वन्न मुख कर मन व लोचन !

सय मुनी ज्पाएँ हैंस कर  
भाव दीप्त करती उर व स्तर,  
रसोमेय भगल प्रहय वा  
तुरता जीवन में वातायन !

२५१

गल

एला

इरना

(उनसठ)

मन निस्व  
चित् बरत  
रवि,  
मन क होवत!

अघकार का मुख पहचानें !  
यह अनत मुख शेष नाग  
जोधरा स्वग उरमें फन ताने !

म कर  
क स्त,  
ग व  
में वातावन!

चात गढ इसका आवपण  
गढना गोपन रस के बधन  
हैकता चित प्रवाश का आनन  
अगणित इसके ठोर ठिकाने !

निश्चेतन की गुह्य नीव पर  
जीवन सौध सडा दिव सुदर,  
सिर पर स्वण वलय रवि भास्वर  
एक अभिन प्रभा तम जानें !

ज्योति-योनि तम मुने न सशय,  
एक ब्रह्म दिन होने को ल्य,  
हैसता नव जीवन अरुणोदय  
लगी गुहा धीरे मुसवाने !

२५०

३०

२५

४०

५०

६५

४०

११०

४०

१००

५०

३५

६०



नही पूणता प्राप्त कल्पना,  
स्वयं स्वप्न भी रिक्त जल्पना,  
प्रीति रश्मि को भाव भूत हो  
जन भू पथ पर करना विचरण !

कभी कृप तम में भय कुठित  
हृदय ज्योति रह सकती गुठित ?  
श्री शोभा सुख स्वयं बनेगा  
निरचय मग्मय जन भू प्रागण !

हिम गिरि ढाला-स सित निस्वर  
स्फाटिक भावा के चिद अवर  
जगते—इन्द्रधनुष स्मति रजित,  
स्वप्न मुग्ध कर मन के लोचन !

सय मुली ऊपार हंस वर  
भाव दीप्त कस्ती उर के स्तर  
रसोन्मय मगल प्रहृष वा  
सुखता जीवन में वातायन !

न्य

२५०

३०

२५

४०

५०

६५

४०

११०

४०

१००

८०

३५

६०

(उनसठ)

अधकार का मुख पहचानें !  
यह जनत मुख शय नाग  
जोधरा स्वग उर में फन ताने !

नात गढ़ इसका आवपण  
गढता गोपन रस के बधन  
ढँकना चित प्रकाश का आनन  
अगणित इसके ठौर ठिकान !

निश्चेतन की गुह्य नीय पर  
जीवन सीध लडा दिव सुदर  
सिर पर स्मरण कलश रवि भास्वर  
एक श्रमिन् प्रभा तम जानें !

ज्योति-यौनि तम, मुझे न सशय,  
एक ब्रह्म दिन होने को ल्य  
हँमता नव जीवन अरुणादय  
रगो गुहा धीरे मुसवाने !

पी बटने से पहिले

१६०

मिन निश्च  
चित्त बरत  
स्मृति रक्ति  
& मन क तोस !

हम कर  
& क स्तर  
प्रहय का  
म बागपन !

पी बटने से पहिले

तम सोइ आभा नि सगय  
इसे जगाने का ले निणय—  
सजन बला का पाएँ परिचय  
खोल सष्टि के तान बान !

इप्यै क्रोध बलह मद भत्तर  
अधकार व अधोमुदी स्तर—  
जीवन भूत्या का रत्नाकर  
वह विकाम पो देता मान !

खोलो ह तन मन के बधन  
जग का परिचय पाने नूतन  
तम प्रकाश मुग ही का दपण  
विभिन्नत जिमम विरन अजात !

भाव प्रीति उपजाती मा भय,  
तुम्हें समपित विजय पराजय  
निज प्रकाश म वरो तमम लय  
रम भू पर अणोन्य लान !

म न  
क

म न  
म न  
म न  
म न

न्य

(साठ)

मत अतीत से	२५०
नात दष्टि मन,	३०
तुम विद्रोह करो क्षण प्रतिक्षण !	२५
	४०
	५०
गत जीवन वा शव भत ढो तुम	६५
दया द्रवित अतर मत रो तुम	४०
नया आशा उनसे	११०
पयराए	४०
जड अतीत के प्रतिनिधि जो जन !	१००
	८०
आत्म सिद्धि हित प्रतिघाण प्रेरित	८०
नव सवेदन से उर वचित,	३५
हिम चट्टानों से तिरते वे	६०
अतल स्वाय में डबे गोपन !	
अधवार के अतर निमम	
ये विवीण करते सगाय क्रम,	
व्योम लता-से	
छाए बरबस,	
चूस प्राण मन रग सजीवन !	

वो बच्चे से पहिले

१७१

इ बचन,  
पान नन्द,  
। वा द्वा  
। विरन ब्रह्म।  
। मा, भय,  
। न्य पराजय,  
तमम लय  
अपोग्य राम।

वो बच्चे से पहिले

निम्न शक्तियां स संचालित  
करते नित सत ध्येय प्रताडित  
सावधान है  
मनज रूप में  
प्रेत घरा पर करते विचरण ।

आओ, नव जास्या प्रति जपित  
मनुज हृदय का करें सगठित  
ज्यानि प्रहार  
वर जड तम पर  
भूमिजप फिर दोड भीषण !

नष्ट म्रष्ट हो विवृत पुरानन  
जाग फिर निद्रित उपचतन  
तम पर हो  
विजयी प्रकाश कण  
यह भावा मानवता वा रण !

भाव प्राति हा नव विगम पय  
भरा सजन न यग विनाग रय  
ठुसगओ  
तम व पवन का  
घरा हत्य में हो प्रकाश-रण !

मन जन न मनुष न मनुष  
विचरा प्राति-मनु र्व अमिनन  
रूपानर ह !

जीवन मन वा—  
नर विनाग हा आया गुम गन !

न सर्वाणि  
धूप श्रद्धा

एत म  
र कत विना

न्य

(इकसठ)

प्राण,  
तुमको ही समर्पित  
चेतना, मन, कर्म, वाणी,  
भावनाएँ कामनाएँ भी  
हृदय की—  
ध्यान के दृश सत्र में  
सित स्नेह गुफित  
तुम्हें ही  
सविनय समर्पित।

२५०

३०

२५

४०

५०

६५

४०

११०

४०

१००

विनाम पत्र  
विनाम रत्न

पवन को,  
म हो प्रकाश रूप।

सकल न सकल  
रत्न अमिषक

जीवन मन की—  
जा आवा गन सा।  
वी कटने से पहिले

मप-श्री, मौ-दय प्रतिमाएँ मनोहर  
सतत जो करती रही

मन को विमोहित,—

नील मग दृग, चल भकुटि

नामा सुषर,

गन्धित कपोल,

अषर प्रवाल,

मराल वदा,

पुलक-लता सी वाँह कोमल—

८०

३५

६०

वी कटने से पहिले

१७३

तुम्हें करता हृदय  
अत स्थित  
समापित ।

मान प्रतिवृत्ति ये अविकसित—  
सार सत्य तुम्ही अनश्वर  
मकल श्री गोभा प्रदूष  
प्रवच की मित—

तरणि, तमय भाव गोचर,  
तुम्ही म लय  
प्रपत अतर  
मोन अनुभव रत निरतर  
दयता अय—

तुम्ही हो मवस्व मरी  
तव मयित बुद्धि  
करती यय रेरी—

नियिल तन मन प्राण  
जीवन माय — एकत्रिन  
तुम्हें करना समापित ।

मग पा ननय वा  
अम्बितर रम-मु-नदिन  
मजन रत मुवन अवर । —  
म न रे श्री-मगम  
गामा व न्गितर  
हृदय का जानन में कर  
मिच-मजिन ।

बला हूँ  
अतः किं  
मनाति।

र

मनस्य नरी,  
मनाति बहि  
ी व्यथ नरी—  
तु मत् प्रा  
साध, — एकीक  
वरता मनाति।

र का  
समुद्रविष  
एत, मन्त कर्त।—

ह धीमन्म  
गोभा क निज  
ो अल म म  
सिप-मन्त्रित।

वी कने से पहिले

चित्तं वैकुण्ठं ना ननु  
मना अकार विरत  
तुम्हारे प्रेम से बचिन।

लोटता व  
ना कुन्तारी ओर,  
जन न प्रीति माल वा  
नन्दिन स्वप्न  
तुमको कर नमपित।

न्य

२५०  
३०  
२५  
४०  
५०  
६५  
४०  
११०  
४०  
१००  
६०  
३५  
६०

पी कटने से पहिले

१७५



तुम्हें करता हृदय  
अत स्थित  
समर्पित !

मान प्रतिकृति ये जिविसित—  
सार सत्य तुम्ही जनश्वर  
मवल श्री गोभा प्रहृष  
प्रकप की मित—

तरणि तमय भाव गोश्वर,  
तुम्ही म लय  
प्रणत अतर  
मोन अनुभव रत निरतर  
दगता अद—

तुम्ही हो मवस्य मरी  
तव मथित बुद्धि  
करती व्यय दरी—

निमित्त तन मन प्राण  
जीवन गाथ - एकथित  
तुम्हें करता समर्पित !

म्यग पा चनाय वा  
अस्मित रम-मु-भिन  
मजन रत, मुक्त अतर !—  
म न र्द श्री-मग्म  
गामा व णितर  
दृश्य वा जानर में वर  
निध-म-जित !

बरता दूय  
अत म्दि  
कर्ता!

रिवत कौचल मा जगत्  
लगता अमार विरस  
तुम्हारे प्रेम से वचित!

लौटना उर  
मा, तुम्हारी ओर,  
जन भ प्रीति ममल वा  
अतद्रित स्वप्न  
तुमका वर समापित!

रन्य

२५०  
३०  
२५  
४०  
५०  
६५  
४०  
११०  
४०  
१००  
८०  
३५  
६०

१९

सब व मरी  
मथित बहि  
"दय्य" था—

तन मन शन  
साय,— एकाकि  
बरता समापित!

२ वा  
नम-मुलदिन  
९, मरुत बर—

० धामम  
।।।।। क गिन  
को अलन म बर  
निध-मरिका!  
वी कन्दे डे इदिने

धी बटने से पहिले

१७५

तुम्हें करता हृदय  
अत स्थित  
समर्पित ।

मान प्रतिवृत्ति ये अविबसित—  
सार सत्य तुम्हीं जनकवर  
सबल श्री गोभा प्रहृष  
प्रकप की मित—

तरणि तमय भाव गोचर,  
तुम्हीं म लय  
प्रगत अतर  
मौन अनुभव रत निरतर  
दगता अव—

तुम्हीं हो सबस्व मरी  
तन मयित बुद्धि  
करती यय दरी—

निगिरल तन मन प्राण  
जीवन माय - एकत्रित  
तुम्हीं करना समर्पित ।

मया वा जनय वा  
अमितर म्-मु-गिन  
नजन रत मुवन अतर ।—  
म न श्री-मम  
गोभा व श्रितर  
हृदय वा ज्ञान में कर  
मि-पु-मजित ।

कविवर पन्त की अन्य  
काव्य कृतियाँ

प्यतन	२५०
पेम्ता	३०
य व	२५
॥	४०
एलि	५०
और बूढा चाद	६५
गी	४०
ानी	११०
	४०
रा	१००
ीणा	८०
म राम	३५
	६०